ISSN 2278-1633ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-6, अंकः 8, संख्या-46 जनवरी 2024 मूल्यः ₹20

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति संग्रहालय

समिति के दो परिसर हैं- गांधी स्मृति और गांधी दर्शन।

गांधी स्मृति, 5, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली पर स्थित है। इस भवन में उनके जीवन के अंतिम 144 दिनों से जुड़े दुर्लभ चित्र, जानकारियाँ और मल्टीमीडिया संग्रहालय (Museum) है। जिसमें प्रवेश निःशुल्क है।

दूसरा परिसर गांधी दर्शन राजघाट पर स्थित है। यहाँ 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश' प्रदर्शनी, डोम थियेटर और राष्ट्रीय स्वच्छता केंद्र संग्रहालय (Museum) है।

दोनों परिसर के संग्रहालय प्रतिदिन प्रातः 10 से शाम 6:30 तक खुलते हैं।
(सोमवार एवं राजपत्रित अवकाश को छोड़ कर)

ISSN 2278A 1633ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-6, अंक: 8, संख्या-48
जनवरी 2024

संरक्षक
विजय गोयल
उपाध्यक्ष, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

प्रधान सम्पादक
डॉ. ज्वाला प्रसाद

सम्पादक
प्रवीण दत्त शर्मा
पंकज चौबे

परामर्श
वेदाभ्यास कुंडू

प्रबन्ध सहयोग
शुभांगी गिरधर

आवरण
इरफान

रेखांकन
संजीव शाश्वती,

मूल्य : ₹ 20
वार्षिक सदस्यता : ₹ 200
दो साल : ₹ 400
पांच साल : ₹ 500

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23392796
ई-मेल : antimjangsds@gmail.com
2010gsds@gmail.com

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट,
नई दिल्ली-110002, की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेखकों द्वारा उनकी रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण उनके अपने हैं, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली के नहीं।
समस्त मामले दिल्ली न्यायालय में ही विचाराधीन।

मुद्रक
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092

इस अंक में

उपाध्यक्ष की कलम से... 2
सम्पादकीय 3
आपके खत 4
धरोहर
मनोवृत्ति को बदलें - *मोहनदास करमचंद गांधी* 5
भाषण
पण्डित मदनमोहन मालवीय सम्पूर्ण वाङ्मय के लोकार्पण के अवसर पर - *श्री नरेंद्र मोदी* 9
विशेष
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद: संविधान सभा के अध्यक्ष - *डॉ. श्री भगवान सिंह* 13
चिंतन
विश्व शांति के लिए गांधी ही विकल्प - *प्रो. कन्हैया त्रिपाठी* 27
विमर्श
विरासत और सतत् विकास का सूत : खादी - *डॉ शुभंकर मिश्र* 31
बापू की राष्ट्र निर्माण की साधना - *डॉ रामेश्वर मिश्र* 36
साहित्य चिंतन
गांधी दर्शन को हिंदी साहित्य में अभिव्यक्त करते कवि : सुमित्रानंदन पंत - *संतोष पटेल* 41
सामयिक
विश्वभर में फैल रहा हिन्दी का साम्राज्य - *डॉ. अर्पण जैन* 43
पर्यावरण
प्रकृति हमारी सबसे अच्छी शिक्षक है - *सीताराम गुप्ता* 46
कविता
गिरिजाकुमार माथुर 49
सुशील स्वतंत्र की कविताएँ 51
बाल कहानी
जंगल में हड़ताल - *बद्री प्रसाद वर्मा अनजान* 54
मोबाइल में घनचक्कर - *रोचिका अरूण शर्मा* 55
प्रेरक-प्रसंग
मंजिल अभी दूर है - *कुसुम अग्रवाल* 58
फोटो में गांधी 59
चित्रकारी 61
गतिविधियाँ 62

असाधारण व्यक्तित्व : गांधी

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी....वह साधारण सा दिखने वाला व्यक्ति, जिसने अपने जीवन में इतने असाधारण कार्य किए कि उनके देवलोक गमन के 76 वर्षों के उपरांत भी भारत और दुनिया में उनके नाम का डंका बज रहा है। समाज, राज्य, जातियों की कोई भी समस्या हो, उसके समाज की खोज गांधी मार्ग पर जाकर समाप्त होती है।

गांधीजी जब दक्षिण अफ्रीका में वकालत कर रहे थे, तब उन्हें कदम-कदम पर अश्वेतों और भारतीयों के प्रति रंगभेद की घटनाओं का सामना करना पड़ा। वर्ष 1913 की वह इतिहास प्रसिद्ध घटना तो हम सबको याद ही होगी, जब प्रथम श्रेणी का रेल टिकट होने के बावजूद अश्वेत होने के कारण गांधी जी को दक्षिण अफ्रीका के रेलवे स्टेशन पर अपमानित कर, उन्हें रेल के डिब्बे से बाहर फेंक दिया। रंगभेद की यह घटना गांधीजी में गहरे उतर गई। यही कारण था कि जब वह दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे तो उन्होंने मानव असमानता और अस्पृश्यता के विरूद्ध संघर्ष आरंभ कर दिया। चूंकि गांधीजी ने भेदभाव और अपमान के कड़वे घूंट दक्षिण अफ्रीका में पी रखे थे, इसलिए वह छुआछूत और असमानता से मिलने वाले दुख से भली-भांति परिचित थे। जैसा उनके साथ हुआ, वैसा किसी भी अन्य वर्ग, वर्ण या जाति के लोगों के साथ न हो, ऐसी सोच उनकी बन गई थी और इन बुराइयों की रोक-थाम के लिए उन्होंने अभियान छेड़ दिया। ''अस्पृश्यता पाप है, इसलिए इसे मिटाना चाहिए।'' वे कहते थे। ये बात इतिहास में दर्ज है कि अपने अस्पृश्यता उन्मूलन अभियान के दौरान गांधी जी को लोगों की खूब आलोचनाएं सुनने को मिली। लेकिन इन आलोचनाओं के बावजूद बापू अपनी मुहिम में लगे रहे और उनका ये अभियान, गरीबों, पिछड़ों और कुचले लोगों की आवाज बन गया।

गांधीजी मानते थे कि केवल स्वतंत्रता प्राप्ति से ही राष्ट्र का भला नहीं होगा। देश का सम्पूर्ण विकास तो सामाजिक, सांस्कृतिक बुराइयों व अन्य सुधारों से ही होगा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने स्वाधीनता आंदोलन में सामाजिक सुधारों को भी मिश्रित कर दिया। वे जहां भी जाते, लोगों को अंग्रेजों के विरूद्ध आंदोलन करने के साथ-साथ स्वयं में सुधार और कुछ नया सीखने के लिए भी लोगों को प्रेरित करते। क्योंकि वे जानते थे कि आजादी मिलने के बाद उसे संभालकर रखना भी एक बड़ी चुनौती होगी, इसलिए उन्होंने नागरिकों को पहले ही कुरीतियों को त्यागने, आत्मनिर्भर व स्वावलंबी बनने और समाज को साथ लेकर चलने के गुर सिखाने आरंभ कर दिए थे। चरखे का प्रयोग लोगों को स्वावलंबी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था।

वास्तव में गांधीजी को मात्र एक राजनीतिज्ञ या आंदोलनकारी कहना उनके साथ अन्याय होगा, वे एक समग्र पुरूष थे। यदि हम उनके जीवन का अवलोकन करें तो पाएंगे कि बापू बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। वे राजनीतिज्ञ भी थे, वे कई भाषाओं के ज्ञाता भी थे, लेखक भी थे, पत्रकार भी थे, सत्याग्रही भी थे, वैद्य भी थे। उनका यही बहुआयामी व्यक्तित्व उन्हें अपने समकालीन नेताओं से कहीं अधिक महान बनाता है। आज हमें खासकर युवा पीढ़ी को उनके जीवन को गंभीरता से पढ़ने और मनन करने की आवश्यकता है। उनकी पुण्यतिथि पर यही उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

इस बार के अंतिम जन में महात्मा गांधी के जीवन के विविध आयामों पर आलेख संकलित किए गए हैं। आशा है सुधी पाठकों को यह सामग्री पसंद आएगी।

विजय गोयल

मुक्ति पारलौकिक नहीं लौकिक है: गांधीजी

महात्मा गांधी ने भारत ही नहीं अपितु पूरी दुनिया को बहुत कुछ दिया है। सत्याग्रह भी समाज को उनकी ऐसी ही देन है। जो हर समय, हर युग में प्रासंगिक भी रहेगा और लोगों को राह भी दिखलाता रहेगा।

गांधीजी के सत्याग्रह में व्यापकता है। यह मनुष्य की मुक्ति का एक सशक्त मार्ग है। यह मुक्ति पारलौकिक नहीं लौकिक है। गांधीजी को दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह शब्द मिला। जिसे उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के अपने संघर्ष में कई बार इस्तेमाल किया और सफलता प्राप्त की। सत्याग्रह के इस अचूक अस्त्र का उन्होंने भारत में भी प्रयोग किया। गांधीजी का भारत आगमन के बाद पहला सत्याग्रह चम्पारण में हुआ। चम्पारण आन्दोलन ने गांधीजी को सत्याग्रह का पर्याय बना दिया।

यदि देखा जाए तो हमारा इतिहास-पुराण भी सत्याग्रह के उदाहरणों से भरा पड़ा है। हम श्रीराम का जीवन देख लें। वह सत्य को समर्पित था। राम और रावण का युद्ध शरीर बल और आत्मबल का सूचक है। इसी तरह भक्त प्रह्लाद, कबीर, मीराबाई के जीवन का यदि हम सूक्ष्मावलोकन करें तो सत्याग्रह की पराकाष्ठा दिखाई देती है। भगवान बुद्ध महावीर जैसे महापुरुषों ने जीवन में सत्य और अहिंसा की राह पर अपने जीवन का आत्मोत्सर्ग किया। इन महापुरुषों ने हमें सिखाया कि सत्य का रास्ता कठिन अवश्य है पर यही वह मार्ग है जिसपर सच्चे अर्थों में मनुष्य को आध्यात्मिक सुख के साथ शान्ति मिलती है।

ऐतिहासिक दृष्टि से हम देखें तो सत्याग्रह का प्रसार करने का श्रेय गांधीजी को जाता है। यह उनके सत्य के प्रति आग्रह का ही परिणाम था कि गांधी के विरोधी भी उन पर अटल विश्वास था। विरोधियों का विश्वास उन्होंने अपने सत्यनिष्ठा से जीता था। जनता गांधीजी की एक आवाज पर सब कुछ त्याग कर सत्याग्रह में हिस्सा लेती थी। तात्पर्य यह है कि गांधीजी के व्यक्तित्व का आकर्षण लोगों के हृदय में था। गांधीजी का यह आकर्षण त्याग और बलिदान से निर्मित हुआ था। आधुनिक समय में विश्व शांति के लिए गांधी से बड़ा कोई नायक नहीं हो सका। युद्ध-आतंक से मानवता को नहीं बचाया जा सकता। मानवता को बचाने के लिए विश्व को गांधी जीवन-दर्शन को आत्मसात करने की आवश्यकता है। इस दर्शन से जीवन के आर्थिक, समाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में नैतिकता और शुचिता का समावेश करना होगा। दरअसल गांधीजी ने सम्पूर्ण स्वाधीनता आन्दोलन में जनमानस को लड़ाई लड़ने के लिए तैयार किया। गांधी सत्य और अहिंसा के मार्ग पर आजीवन चलते रहे। विश्व को उन्होंने मानवता का जो धर्म सिखाया वह धर्म चिर शांति का है।

'अन्तिम जन' का ताजा अंक प्रस्तुत है। इस बार गांधीजी के शहीद दिवस पर श्रद्धांजलि स्वरूप सामग्री का संकलन किया गया है। इस अंक के बारे में अपनी प्रतिक्रियाओं से हमें जरूर अवगत करवाएं।

डॉ. ज्वाला प्रसाद
निदेशक

आपके ख़त

संग्रहणीय पत्रिका

'अंतिम जन' का अक्टूबर अंक विशिष्ट आलेखों के कारण विशेषांक ही बन पड़ा है। दर्शन और साहित्य के विद्वान श्री राधावल्लभ त्रिपाठी जी ('भारतीय परंपरा से वर्तमान तक : संवाद की समस्याएँ और संभावनाएँ'), गांधी कला केंद्र के अधयक्ष और इतिहासविद् श्री रामबहादुर राय जी (नेताजी का संघर्ष पथ: अज्ञात में बड़ी छलाँग) और साहित्यकार, आलोचक नंदकिशोर आचार्य जी (स्वराज की तत्त्वमीमांसा) के आलेखों के कारण यह अंक संग्रहणीय बन गया है! त्रिपाठी जी का तो प्रत्येक आलेख शोध-आलेख की तरह ही होता है। गांधी पर प्रधानमंत्री के विचार पठनीय हैं। 'उपवास का महत्त्व' (गांधी) तो विशिष्ट है ही। 'उपाध्यक्ष की कलम से' और संपादकीय के अतिरिक्त, शेष रचनाएँ भी पत्रिका की गरिमा के अनुकूल हैं।

डॉ. विनय कुमार सिंह,
तुरकौलिया, पूर्वी चम्पारण,
बिहार

अच्छी पत्रिका

'अंतिम जन' पत्रिका का कलेवर वर्तमान में प्रकाशित हिंदी की अन्य पत्रिकाओ में बेहतर है। पत्रिका के नियमित प्रकाशन के लिए सबसे पहले प्रधान सम्पादक को बधाई। पत्रिका अब नियमित रूप से हमें प्राप्त हो रही है।

'अंतिम जन' के नए अंक का हमें इंतजार होता है। पत्रिका में प्रकाशित लेख हमारे विचार को पुष्ट करता है। विचार की शुद्धता के लिए अध्ययन बहुत आवश्यक प्रक्रिया है। सितम्बर अंक में भाषा से सम्बंधित आलेख प्रकाशित हुए हैं। जिनमें हिंदी की आवश्यकता को प्रस्तुत किया गया है। गांधी हिंदी के सबसे बड़े पक्षधर थे। उन्हें ज्ञात था कि हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो भारत को जोड़ने में सक्षम है। इसको सहजता से सीखी जा सकती है। हिंदी की बोलियों से इसकी बहुत समानता है लिपियों और बोली में। इस वजह से यह सहज है। हिंदी एक सक्षम भाषा है। जिनमें बहुत सारी भाषाओँ का समावेशन है। गांधी जी ने दक्षिण के लोगों से आग्रह किया कि आप सब हिंदी सिखने का प्रयास करें। जिससे पूरे भारत को जोड़ा जा सके। भारत विविधता का देश है। जिसमे तरह तरह की भाषाएँ हैं।

अच्छे अंक के लिए बहुत बहुत धन्यवाद।

हेम चंद्र नेगी
रानी खेत, उत्तराखण्ड

गांधी विचार की पत्रिका

'अंतिम जन' पत्रिका में प्रकाशित आलेख, भाषण व्याखान, कहानी और कविताएं बहुत अच्छे ढंग से प्रस्तुत की जाती है। पत्रिका में विचार के स्तर पर जो विविधता दृष्टिगत होती है वह बहुत ही सकारात्मक है। पत्रिका आज मुनाफा का और व्यापार का माध्यम बनती जा रही हैं। इस दौर में 'अंतिम जन' पत्रिका गांधी दर्शन की संवाहक है। विचार प्रवाह का जीवन में बहुत व्यापक महत्व का है। विचार से शून्य मनुष्य समाज और राष्ट्र के लिए बहुत घातक हैं। गांधी आजीवन राष्ट्र निर्माण की बात सोचते और उसपर चल कर अन्य लोगों को चलने के लिए प्रेरित करते थे। समाज जोड़ने की बात ही राष्ट्र निर्माण की मजबूत कड़ी है। गांधी विचार एक विधा है जिससे आज बच्चों को अवगत करवाने की आवश्यकता है। आज समाज उपभोगतावादी बन गई है। समाज में हर स्तर पर संतोष की भावना समाप्त होती जा रही है। यह एक घातक संदेश है। इससे समाज में गलत संदेश जा रहा है।

'अंतिम जन' पत्रिका समाज को जोड़ने का माध्यम है। समाज को सभी स्तर पर बेहतर करने की कोशिश करनी चाहिए।

मुकेश भटेले
ग्वालियर, मध्य प्रदेश

मनोवृत्ति को बदलें

मोहनदास करमचंद गांधी

मैंने जबसे 'यंग इंडिया' के सम्पादक-पदका दायित्व सँभाला है तबसे ऐसा कभी नहीं हुआ कि बीमार अथवा कैद न रहते हुए भी 'यंग इंडिया' या नवजीवन के लिए कुछ-न-कुछ न भेजूं। लेकिन मेरे इस बार के लन्दन-प्रवास में ऐसी स्थिति नहीं रही।

वहाँ मुझे लगातार एक के बाद एक काम में व्यस्त रहना पड़ता था और इतना ज्यादा काम था कि आधी-आधी रात के बाद भी जगे रहना पड़ता था। इसलिए इन पत्रों के लिए कुछ भी लिख पाना मेरे लिए असम्भव ही रहा। सौभाग्य से महादेव देसाई मेरे साथ थे और यद्यपि उन पर भी काम का बेहिसाब बोझ था, लेकिन वे 'यंग इंडिया' के लिए पूरी साप्ताहिक खुराक भेज देने का समय निकाल ही लेते थे। फिर भी, पाठक मुझसे लन्दन यात्रा के अपने अनुभव और प्रतिक्रियाएँ देने की अपेक्षा तो करेंगे ही। यद्यपि मैं वहाँ बहुत डरता-घबराता गया था, लेकिन मुझे वहाँ जाने का कोई दुःख नहीं है। वहाँ जिम्मेवार अंग्रेज पुरुषों तथा स्त्रियों से मेरा सम्पर्क हुआ और साधारण लोगों से भी। हमें चाहे फिर एक और मोर्चा लेना पड़े या नहीं, ये अनुभव भविष्य में अमूल्य महत्त्व के साबित होंगे। आप किसके साथ लड़ रहे हैं या किसके साथ आपका व्यवहार चल रहा है, यह जानना कोई कम महत्त्व की बात नहीं है। यह बहुत अच्छा संयोग था कि किंग्सले हॉल सेवाश्रम के प्राण म्युरियल लेस्टरने मुझे अपनी बस्ती में ठहरने का निमन्त्रण दिया और मैंने उस निमन्त्रण को स्वीकार भी कर लिया। किंग्सले हॉल और श्री बिड़ला के आर्य भवन, इन्हीं दो स्थानों में से एक को चुनना था। निर्णय लेने में न तो मुझे कोई कठिनाई हुई, न श्री बिड़ला को ही। लेकिन भारतीय भाइयों ने आर्य भवन में ठहरने के लिए स्वभावतः मुझ पर बहुत जोर डाला। अनुभव से सिद्ध हो गया कि किंग्सले हॉल मेरे ठहरने का आदर्श स्थान था। यह लन्दन के गरीबों की बस्ती के बीच में बना हुआ है और केवल उन्हीं की सेवार्थ समर्पित है। म्युरियल लेस्टर की प्रेरणापर बहुत-सी स्त्रियों और कुछ पुरुषों ने भी इस सेवा के निमित्त अपने को सर्पित कर दिया है। इस विशाल भवन के किसी कोने का भी अन्यथा उपयोग नहीं किया जाता। यहाँ धार्मिक गोष्ठी और पूजा-प्रार्थना होती है, मनोरंजन की व्यवस्था है, भाषणों का आयोजन होता है, बिलियर्ड खेलने को व्यवस्था है, वाचनालय आदि है और ये सब गरीबों के उपयोग के लिए है। यहाँ रहने वाले लोग अत्यन्त सादा

सौभाग्य से महादेव देसाई मेरे साथ थे और यद्यपि उन पर भी काम का बेहिसाब बोझ था, लेकिन वे 'यंग इंडिया' के लिए पूरी साप्ताहिक खुराक भेज देने का समय निकाल ही लेते थे। फिर भी, पाठक मुझसे लन्दन यात्रा के अपने अनुभव और प्रतिक्रियाएँ देने की अपेक्षा तो करेंगे ही। यद्यपि मैं वहाँ बहुत डरता-घबराता गया था, लेकिन मुझे वहाँ जाने का कोई दुःख नहीं है। वहाँ जिम्मेवार अंग्रेज पुरुषों तथा स्त्रियों से मेरा सम्पर्क हुआ और साधारण लोगों से भी।

जीवन व्यतीत करते हैं। पूरे आश्रम में एक भी गैर-जरूरी उपस्कर नहीं है। आश्रमवासी छोटे-छोटे कमरों में रहते हैं, जिन्हें सेल कहा जाता है। वहाँ हम पाँच लोगों के रहने की व्यवस्था करने में भी बड़ी कठिनाई हुई।

यह तारीख ''दैनन्दिनी, 1931'' में इसी तारीख में दर्ज इन्दराजसे ली गई है।

लेकिन जहाँ स्नेह होता है वहाँ जगह न होने पर भी जगह निकल ही आती है। चार आश्रमवासियों ने अपना-अपना कमरा छोड़ दिया और ये कमरे हमें दे दिये गये। बिस्तर वगैरह माँगकर काम चलाना पड़ा। सौभाग्य से हम सबके पास कम्बल काफी थे, और चूंकि हम लोगों को फर्शपर बैठने की आदत थी, इसलिए जो चीजें माँगकर लाई गई थीं, उनमें से अधिकांश हमने वापस कर दी। इसमें सन्देह नहीं कि मेरा वहाँ रहना आश्रम वालों के लिए समय, स्थान तथा अन्य दृष्टियों से भी बहुत असुविधाजनक था, लेकिन वहाँ के नेक लोग मेरे वहाँ से हटने की बात सुनने को तैयार ही नहीं थे। उनकी स्नेहपूर्ण, मूक और बलक्षित सेवाएँ प्राप्त करके मैं धन्य हो गया। लन्दन के ईस्ट एंड के गरीब लोगों के साथ मेरा जीवन्त सम्पर्क मेरे लिए सतत आनन्द का विषय था। कहने की जरूरत नहीं कि मैं वहाँ ठीक उसी तरह रहा जिस तरह भारत में रहता हूँ, और ईस्ट लन्दन की सड़कों पर सुबह-सुबह का वह घूमना तो मेरी स्मृति में सदा बना रहेगा। इस प्रातः भ्रमण में जो लोग मेरे साथ होते थे और जिन्हें म्युरियल आने देती थीं, उनके साथ मेरी अन्तरंग बातचीत होती थी। वहाँ म्युरियल सबको मुझसे बातचीत करने की छूट नहीं देती थीं, क्योंकि उन्हें मेरे समय का बड़ा ख्याल रहता था। अगर वे ऐसा कुछ सुन लेती थी कि उनकी अनुपस्थिति में लोगों ने मेरा वक्त बरबाद किया तो वे बहुत नाराज होती थी।

ईस्ट लन्दन में रहते हुए मुझे मानव-स्वभाव के सर्वोत्तम पक्ष का परिचय मिला और मेरे इस सहज विश्वास की पुष्टि हुई कि गहराई में उतरकर देखें तो पूर्वी और पश्चिमी दुनिया-जैसी कोई चीज नहीं है। जब ईस्ट एंड के लोग मुस्कराकर मेरा अभिवादन करते थे तो मैं साफ देख सकता था कि उनमें कोई दुर्भावना नहीं है और वे चाहते हैं कि भारत अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता पुनः प्राप्त करे। अगर मेरे इंग्लैंड के और भी निकट आने की कोई गुंजाइश थी तो इस अनुभव ने मुझे उसके और निकट ला दिया है। मेरा झगड़ा व्यक्तियों से कभी नहीं होता, वह तो उनके रंग-ढंग और कार्यों से होता है। लेकिन ईस्ट लन्दन के सीधे-सादे गरीब लोगों के साथ, जिनमें बच्चे भी शामिल हैं, मेरा निकट-सम्पर्क मुझे इस बात के लिए और भी सचेत कर देने वाला है कि मैं जल्दबाजी में कोई कदम न उठाऊँ ।

यहाँ मुझे लंकाशायर तथा वहाँ के कर्मचारियों और मालिकों के साथ हुए अपने अत्यल्प सम्पर्क के अनुभव का उल्लेख भी अवश्य करना चाहिए। मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उनमें कोई पूर्वग्रह नहीं है और वे नये तथ्यों तथा उन पर आधारित निष्कर्षों को सुनने-समझने के लिए तैयार रहते हैं। बेशक, यहाँ मेरे लिए पृष्ठभूमि चाली एन्ड्रयूज ने तैयार कर दी थी। मुझे ग्रेट ब्रिटेन के सबसे निष्पक्ष और सच्चे पत्र 'मैंचेस्टर गाडियन' के सम्पादक श्री सी. पी. स्कॉट के साथ अपनी अविस्मरणीय भेंट का उल्लेख भी करना ही चाहिए। एक महान् अंग्रेज राजनयिक ने मुझे बताया कि 'गाडियन' दुनिया का सबसे अधिक विवेकशील और ईमानदार पत्र है। इसी प्रकार मैं कैटरबरी, चिसेस्टर, ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज तथा ईटन के समागमों को भी आसानी से नहीं भूल सकता। इन सबसे ब्रिटेन वाले मन में क्या सोचते हैं, इस चीज को मैं इतनी अच्छी तरह समझ सका जितनी अच्छी तरह किसी और तरीके से नहीं समझ सकता था। इन सम्पर्कों के परिणामस्वरूप कुछ लोगों से मेरी स्थायी मैत्री हो गई है। जिन लोगों के सम्पर्क में मैं आया उनमें उन दो गुप्तचरों तथा उनके साथियों और उन अनेक सिपाहियों का भी उल्लेख करना आवश्यक है जिनको मेरे लिए तैनात किया गया था। सार्जेंट इवान्स और साजेंट रॉजर्स, ये दोनों गुप्तचर मेरे लिए केवल पुलिस अधिकारी ही नहीं थे। वे मेरे संरक्षक, मार्गदर्शक और मित्र बन गये। मेरी सुविधाओं का खयाल तो वे स्नेहमयी परिचारिकाओं की-सी तत्परता से रखते थे। और मेरे लिए यह बड़ी खुशी की बात थी कि मेरे अनुरोध पर उन्हें मेरे साथ ब्रिडिसी तक आने दिया गया।

और यद्यपि सन्त रोमाँ रोलां के निवास स्थान विले न्यूकी अपनी तीर्थ यात्रा का उल्लेख मैं अन्त में कर रहा हूं, लेकिन महत्त्व की दृष्टि से आप इसे अन्तिम स्थान पर न रखें। यदि में केवल उनसे तथा छाया की भाँति सदा उनके

साथ रहने वाली उनकी बहन मेडेलीन से, जो उनको दुभाषिया और मित्र भी हैं, मिलने के लिए ही भारत से निकल सकता तो केवल इसी उद्देश्य से वहाँ की यात्रा करता। लेकिन केवल इस काम के लिए मेरा यहाँ से जाना सम्भव नहीं था। किन्तु गोलमेज परिषद् के कारण यह तीर्थयात्रा मेरे लिए सम्भव हो गई और संयोग से मेरे रास्ते में रोम भी पड़ा। मैं उस महान् तथा प्राचीन नगर और इटली के निर्विवाद अधिनायक मुसोलिनी को भी किसी हृदय तक देख पाया। और वैटिकन क्रूसपर चढ़े ईसा मसीह की उस सजीव प्रतिमा को नमन करने के लिए मैं कौन-सा मूल्य नहीं चुका सकता था? मानव-इतिहास की उस महान् दुर्घटना के उस जीवन्त दृश्य ने मुझे इस तरह बाँध लिया था कि वहाँ से अलग होते हुए मुझे लगभग वियोग का दु:ख अनुभव हो रहा था। वहाँ मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि व्यक्ति के ही समान राष्ट्र का निर्माण भी शूली को पीड़ा, कष्टों की आँच सहने से ही सम्भव है। सच्चे आनन्द की प्राप्ति दूसरों को कष्ट पहुँचाने से नहीं, बल्कि खुशी-खुशी स्वयं कष्ट सहने से ही हो सकती है।

इसलिए मैं निराश होकर नहीं, बल्कि और भी आशा लेकर स्वदेश लौटा हूँ। इस आशा का आधार यह तथ्य है कि मैंने इंग्लैंड और यूरोपीय महाद्वीप में जो-कुछ देखा उससे सत्य और अहिंसा में मेरी आस्था कम होने के बजाय और भी पुष्ट हुई है। वहाँ मुझे अपनी अपेक्षा से अधिक समान-धर्मी लोगों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ ।

गोलमेज परिषद् के सम्बन्ध में मैं तो आपको कुछ नया बता नहीं सकता। उसके गठन तथा उसकी उपलब्धियों के बारे में अपने विचार मैंने वहाँ साफ-साफ बता दिये। लेकिन यहाँ मैं एक बात कहना चाहूंगा। वहाँ से मैं अपने मन में यह धारणा लेकर आया हूँ कि वे जो कुछ कहते हैं, वही उनके हृदयों में भी है, लेकिन वे बहुत अधिक लाचारी के बीच काम कर रहे हैं। मूलभूत बातों के सम्बन्ध में प्रतिनिधियों में जहाँ ऊपर से मतैक्य दिखाई देता था, वहाँ बहुत ही महत्त्वपूर्ण तफसीलों के सम्बन्ध में उन्होंने आश्चर्यजनक मतभेद का परिचय दिया। अल्पसंख्यकों की समस्या एक भारी गुत्थी बन 481 गई, जिसमें दोष केवल मन्त्रियों का ही नहीं था। लेकिन यह तो एक अस्थायी लाचारी थी। उनकी सबसे बड़ी लाचारी इस बात में थी कि भारत में ब्रिटिश राज्य की स्थापना के समय से ही उनके भारत-स्थित एजेन्ट उन्हें अक्सर एक-पक्षीय सरासर झूठी बातें बताते रहे हैं और उनके सामने उन्हीं वर्गों के मत रखते रहे हैं जो राष्ट्र-विरोधी हैं। भारत के सम्बन्ध में उनकी जानकारी का यही स्रोत रहा है और इनकी भेजी जानकारी को मन्त्रियों ने आम तौर पर परम सत्य की तरह ग्रहण किया है। इसलिए वे हमें अपनी सुरक्षा-व्यवस्था और वित्तीय मामलों को स्वयं ही सँभालने में अक्षम मानते हैं। वे मानते हैं कि भारत के कल्याण के लिए भारत में ब्रिटिश सेना और ब्रिटिश अधिकारियों का रहना आवश्यक है। दुनिया के किसी अन्य राष्ट्र में ब्रिटेन से अधिक आत्म-प्रवंचना की क्षमता शायद ही हो।

गोलमेज परिषद् के सम्बन्ध में मैं तो आपको कुछ नया बता नहीं सकता। उसके गठन तथा उसकी उपलब्धियों के बारे में अपने विचार मैंने वहाँ साफ-साफ बता दिये। लेकिन यहाँ मैं एक बात कहना चाहूंगा। वहाँ से मैं अपने मन में यह धारणा लेकर आया हूँ कि वे जो कुछ कहते हैं, वही उनके हृदयों में भी है, लेकिन वे बहुत अधिक लाचारी के बीच काम कर रहे हैं।

मैं जो कुछ लिख रहा हूँ उसकी पुष्टि के लिए मैं पाठकों से सर सैम्युअल होर का वह भाषण पढ़ने को कहूँगा जो उन्होंने श्वेत पत्र (हवाइट पेपर) पर चल रही बहस के दौरान कॉमन्स सभा में दिया था। मैं जितनी बार भारत-मन्त्री से मिला, हर बार उनकी ईमानदारी और साफगोई के सम्बन्ध में मन पर कुछ बेहतर छाप लेकर ही लौटा, हालाँकि मुझे चेतावनी के तौर पर लोगों ने उनके विषय में इसके विपरीत बातें ही बताई थीं। वे मुझे ब्रिटिश मन्त्रियों में सबसे अधिक निष्कपट और स्पष्टवादी आदमी लगे। वे काफी दृढ़ आदमी भी हैं, लेकिन उतने ही सख्त भी। मैं मानता हूँ कि वे निर्ममता पूर्ण दमन-नीति अपनाने और कड़ी से कड़ी कार्रवाई करने की सलाह या सहमति भी दे सकते हैं। ऐसी सलाह या सहमति देकर भी वे सच्चे दिल से यही मानेंगे क उन्होंने उस सर्जन की तरह दया का कार्य किया है जो आवश्यकता पड़ने पर बहुत ही दृढ़ता और मजबूती से अपने रोगी पर शल्य चिकित्सा की अपनी छुरीका प्रयोग करता है। भारत-मन्त्री

सचमुच बहुत ही परिश्रमी और ईमानदार आदमी है और वे ज्वर से पीड़ित रहने पर भी अपना काम करते रह सकते है। किसी भी क्षण उन्हें क्या करना है, इस बात को वे बहुत साफ-साफ जानते हैं। उनके पीछे ब्रिटेन के सभी दलों के लोग हैं और ब्रिटेन के आधुनिक इतिहास में ज्ञात काफी बड़ा बहुमत उनके साथ है। इसलिए उनका भाषण ब्रिटिश ढंग का सबसे अच्छा भाषण है। फिर भी, तथ्य यह है कि कांग्रेस की माँगों की दृष्टि से इसमें कही बातें सर्वथा अपर्याप्त है और इस सन्दर्भ में जिस शब्दावली का प्रयोग कांग्रेस कर सकती है, उसका प्रयोग करूँ तो कहूंगा कि यह भाषण गलत तथ्यों पर आधारित है, लेकिन दुर्भाग्य से अन्य ब्रिटिश राजनयिकों की तरह वे इन्हें सच मानते हैं।

ब्रिटेन की इस मनोवृत्ति को बदला कैसे जाये, अर्थात् इन अनिच्छुक लोगों के हाथों से सत्ता छीनी कैसे जाये ? ये राजनीतिज्ञ दलील से कायल होने वाले नहीं है। ये सब तपे-परखे और अपनी धुन के पक्के सिपाही हैं। ये तथ्यों को, ठोस कायाँ को पसन्द करते हैं और उन्हीं की भाषा समझते हैं। वे खुल्लम-खुल्ला विद्रोह को भाषा समझेंगे, और अगर ये उसे दवा न सके तो तत्काल यह स्वीकार करेंगे कि हम अपनी रक्षा आप कर सकते है और अपना कार्य-व्यापार स्वयं सँभाल सकते हैं। गौर मैं ब्रिटेन से अपनी इस धारणा को और भी पुष्ट करके लौटा हूँ कि वे अहिंसक विद्रोह की भाषा भी समझेंगे और शायद ज्यादा जल्दी समझेंगे । लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि हमारी सामूहिक अहिंसा-वृत्ति में उनका विश्वास नहीं है। और इससे भी बड़ी बात यह, कि वे मानते हैं कि बड़े पैमाने पर सामूहिक अहिंसा सम्भव ही नहीं है। उनके इस अविश्वास को किसी दलील से दूर नहीं किया जा सकता। विश्वास तो वास्तविक अनुभव से ही उत्पन्न हो सकता है।

इसी तरह वे यह भी नहीं मानते कि वास्तव में जो दल अपने को सौंपे काम को पूरा करके दिखा सके, वह कांग्रेस ही है। जनरल स्मट्स भी उन्हें यह विश्वास नहीं दिला सके कि कांग्रेस ऐसा दल है। उनके भारत-स्थित एजेंटों से मिलने वाली विपरीत जानकारी के रहते हुए वे उन्हें इस बात का विश्वास दिला भी कैसे सकते थे ?

इसलिए मुझे लगता है कि एक बार और अग्नि परीक्षा में से गुजरना आवश्यक है। ब्रिटेन का मन प्रधान मन्त्री की घोषणा में बताई चीजों से कुछ बहुत अधिक देने का नहीं है।

लेकिन मैं जल्दबाजी में किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता। यह लेख मैं 'पिलसना' जहाज पर दिसम्बर को लिख रहा हूँ। मुझे भारत की स्थिति की कोई जानकारी नहीं है। मुझे नहीं मालूम कि आगे बातचीत चलाने की क्या सम्भावनाएँ है। और न मुझे यह मालूम है कि बंगाल, संयुक्त प्रान्त, गुजरात तथा दक्षिण भारत की स्थिति शान्तिपूर्ण वार्त्ता की कितनी गुंजाइश छोड़ती है। हाँ, एक बात जो मेरे नजदीक जितनी स्पष्ट आज हो गई है उतनी पहले कभी नहीं हुई थी। वह यह है कि हमारा असली रण-क्षेत्र लन्दन नहीं, बल्कि भारत है। हमें कायल करना है तो ब्रिटिश मन्त्रियों को नहीं, बल्कि भारत के गैर-सैनिक ब्रिटिश अधिकारियों को। सशक्त से- सशक्त भारत-मन्त्री भी अपने भारत-स्थित एजेंटों की सलाह की बहुत दूर तक उपेक्षा नहीं कर सकता। इंडिया ऑफिस भारत के प्रगति-चक्र में लगा एक अवरोध है। असली सत्ता वाइसराय के हाथों में भी नहीं है, वह तो जिलाधीशों के हाथों में है। इन जिलाधीशों के हाथों में इतनी सत्ता है जितनी दुनिया के किसी वास्तविक अधिनायक के हाथों में भी नहीं है। अधिनायकों के पीछे एक जबरदस्त सरकार के पूरे तन्त्र का बल नहीं होता, लेकिन इनके पीछे यह बल है। लेकिन इस तरह देखने पर समस्या बिलकुल सरल हो जाती है। प्रत्येक जिले की परिस्थितियों की कुंजी खुद उसी के हाथ में है। हमें अपनी मुक्ति खुद ढूंढ़नी है और भारत में ही ढूंढ़नी है – सम्भव हो तो बातचीत के जरिये, और बिलकुल जरूरी हो जाये तो सीधी कार्रवाई के जरिये। मैं जानता हूँ कि मैं उस अग्नि परीक्षा से गुजरने के लिए देश का आवाहन हल के मन से नहीं कर सकता, लेकिन साथ ही अगर मुझे कोई और रास्ता दिखाई नहीं दिया तो सीधी कार्रवाई करने की सलाह देने में भी मैं संकोच नहीं करूँगा। कोई रास्ता ढूंढ़ने के लिए मैं भरसक कोशिश करूँगा ।

अंग्रेजी से,

यंग इंडिया, 31-12-1931

पण्डित मदनमोहन मालवीय सम्पूर्ण वाङ्मय के लोकार्पण के अवसर पर

श्री नरेंद्र मोदी

आज का दिन भारत और भारतीयता में आस्था रखने वाले करोड़ों लोगों के लिए एक प्रेरणा पर्व की तरह होता है। आज महामना मदन मोहन मालवीय जी की जयंती है। आज अटल जी की भी जयंती है। मैं आज के इस पावन अवसर पर महामना मालवीय जी के श्री चरणों में प्रणाम करता हूँ। अटल जी को आदरपूर्वक श्रद्धांजलि देता हूँ। अटल जी की जयंती के उपलक्ष्य में आज देश सुशासन दिवस के रूप में मना रहा है। मैं समस्त देशवासियों को सुशासन दिवस की भी बधाई देता हूँ।

साथियो, आज के इस पवित्र अवसर पर पण्डित मदनमोहन मालवीय सम्पूर्ण वाङ्मय का लोकार्पण होना अपने आपमें बहुत महत्वपूर्ण है। ये सम्पूर्ण वाङ्मय, महामना के विचारों से, आदर्शों से, उनके जीवन से, हमारी युवा पीढ़ी को और हमारी आने वाली पीढ़ी को परिचित कराने का एक सशक्त माध्यम बनेगा। इसके जरिए, भारत के स्वतन्त्रता संग्राम और तत्कालीन इतिहास को जानने समझने का एक द्वार खुलेगा। खासकर, रिसर्च स्कॉलर्स के लिए, इतिहास और राजनीति विज्ञान के छात्रों के लिए, ये वाङ्मय किसी बौद्धिक खजाने से कम नहीं है। बी॰ एच॰ यू॰ की स्थापना से जुड़े प्रसंग, कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व के साथ उनका संवाद, अंग्रेजी हुकूमत के प्रति उनका सख्त रवैया, भारत की प्राचीन विरासत का मान; इन पुस्तकों में क्या कुछ नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण बात कि इनमें से एक खण्ड जिसका राम बहादूर राय जी ने उल्लेख किया, महामना की निजी डायरी से जुड़ा है। महामना की डायरी समाज, राष्ट्र और आध्यात्म जैसे सभी आयामों में भारतीय जनमानस का पथप्रदर्शन कर सकती है।

साथियो, मुझे पता है इस काम के लिए मिशन की टीम और आप सब लोगों की कितने वर्षों की साधना लगी है। देश के कोने-कोने से मालवीय जी के हजारों पत्रों और दस्तावेजों की खोज करना, उन्हें कलेक्ट करना, कितने ही अभिलेखागारों में समुद्र की तरह गोते लगाकर एक-एक कागज को खोजकर लाना, राजा-महाराजाओं के पर्सनल कलेक्शन्स से पुराने कागजों को एकत्र करना, ये किसी भगीरथ कार्य से कम नहीं है। इस अगाध परिश्रम का ही परिणाम है कि महामना का विराट व्यक्तित्व 11 खंडों के इस सम्पूर्ण वाङ्मय के रूप में हमारे सामने आया है। मैं इस महान कार्य के लिए सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को, महामना मालवीय मिशन को, और राम बहादुर राय जी को और उनकी टीम को हृदय से बधाई देता

आज के इस पवित्र अवसर पर पण्डित मदनमोहन मालवीय सम्पूर्ण वाङ्मय का लोकार्पण होना अपने आपमें बहुत महत्वपूर्ण है। ये सम्पूर्ण वाङ्मय, महामना के विचारों से, आदर्शों से, उनके जीवन से, हमारी युवा पीढ़ी को और हमारी आने वाली पीढ़ी को परिचित कराने का एक सशक्त माध्यम बनेगा। इसके जरिए, भारत के स्वतन्त्रता संग्राम और तत्कालीन इतिहास को जानने समझने का एक द्वार खुलेगा।

हूँ। इसमें कई पुस्तकालय के लोगों का, महामना से जुड़े रहे लोगों के परिवारों का भी बहुत बड़ा योगदान रहा है। मैं उन सब साथियों का भी हृदय से अभिनंदन करता हूँ।

मेरे परिवारजनों, महामना जैसे व्यक्तित्व सदियों में एक बार जन्म लेते हैं। और आने वाली कई सदियाँ तक हर पल, हर समय उनसे प्रभावित होते हैं। भारत की कितनी ही पीढ़ियों पर महामना जी का ऋण है। वो शिक्षा और योग्यता में उस समय के बड़े से बड़े विद्वानों की बराबरी करते थे। वो आधुनिक सोच और सनातन संस्कारों के संगम थे! उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में जितनी बड़ी भूमिका निभाई, उतना ही सक्रिय योगदान देश की आध्यात्मिक आत्मा को जगाने में भी दिया! उनकी एक द्रष्टि अगर वर्तमान की चुनौतियों पर थी तो दूसरी ख्रष्टि भविष्य निर्माण में लगी थी! महामना जिस भूमिका में रहे, उन्होंने 'Nation First' 'राष्ट्र प्रथम' के संकल्प को सर्वोपरि रखा। वो देश के लिए बड़ी से बड़ी ताकत से टकराए। मुश्किल से मुश्किल माहौल में भी उन्होंने देश के लिए संभावनाओं के नए बीज बोये। महामना के ऐसे कितने ही योगदान हैं, जो सम्पूर्ण वाङ्मय के 11 खंडों के जरिए अब प्रामाणिक रूप से सामने आएंगे। इसे मैं अपनी सरकार का सौभाग्य समझता हूँ कि हमने उन्हें भारत रत्न दिया। और मेरे लिए तो महामना एक और वजह से बहुत खास हैं। उनकी तरह मुझे भी ईश्वर ने काशी की सेवा का मौका दिया है। महामना की काशी के प्रति अगाध आस्था थी। आज काशी विकास की नई ऊंचाइयों को छू रही है, अपनी विरासत के गौरव को पुनर्स्थापित कर रही है।

मालवीय जी ने हमें एक ऐसे राष्ट्र का विजन दिया था, जिसके आधुनिक शरीर में उसकी प्राचीन आत्मा सुरक्षित रहे, संरक्षित रहे। जब अंग्रेजों के विरोध में देश में शिक्षा के बायकॉट की बात उठी, तो मालवीय जी उस विचार के खिलाफ खड़े हुए, वो उस विचार के खिलाफ थे। उन्होंने कहा कि शिक्षा के बायकॉट की जगह हमें भारतीय मूल्यों में रची स्वतंत्र शिक्षा व्यवस्था तैयार करने की दिशा में जाना चाहिए। और मजा देखिए, इसका जिम्मा भी उन्होंने खुद ही उठाया, और देश को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के रूप में एक गौरवशाली संस्थान दिया।

मेरे परिवारजनों, आजादी के अमृतकाल में देश गुलामी की मानसिकता से मुक्ति पाकर, अपनी विरासत पर गर्व करते हुए आगे बढ़ रहा है। हमारी सरकारों के कार्यों में भी आपको कहीं ना कहीं मालवीय जी के विचारों की महक महसूस होगी। मालवीय जी ने हमें एक ऐसे राष्ट्र का विजन दिया था, जिसके आधुनिक शरीर में उसकी प्राचीन आत्मा सुरक्षित रहे, संरक्षित रहे। जब अंग्रेजों के विरोध में देश में शिक्षा के बायकॉट की बात उठी, तो मालवीय जी उस विचार के खिलाफ खड़े हुए, वो उस विचार के खिलाफ थे। उन्होंने कहा कि शिक्षा के बायकॉट की जगह हमें भारतीय मूल्यों में रची स्वतंत्र शिक्षा व्यवस्था तैयार करने की दिशा में जाना चाहिए। और मजा देखिए, इसका जिम्मा भी उन्होंने खुद ही उठाया, और देश को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के रूप में एक गौरवशाली संस्थान दिया। उन्होंने ऑक्सफोर्ड और कैंब्रिज जैसे संस्थानों में पढ़ रहे युवाओं को बीएचयू में आने के लिए प्रोत्साहित किया। महामना इंग्लिश के महान विद्वान होने के बावजूद भारतीय भाषाओं के प्रबल पक्षधर थे। एक समय था जब देश की व्यवस्था में, न्यायालयों में फारसी और अंग्रेजी भाषा ही हावी थी। मालवीय जी ने इसके खिलाफ भी आवाज उठाई थी। उनके प्रयासों से नागरी लिपि चलन में आई, भारतीय भाषाओं को सम्मान मिला। आज देश की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी, मालवीय जी के इन प्रयासों की झलक मिलती है। हमने भारतीय भाषाओं में हायर एजुकेशन की नई शुरुआत की है। सरकार आज कोर्ट में भी भारतीय भाषाओं में कामकाज को प्रोत्साहित कर रही है। दुख इस बात का है इस काम के लिए देश को 75 साल इंतजार करना पड़ा।

साथियो, किसी भी राष्ट्र के सशक्त होने में उस राष्ट्र की संस्थाओं का भी उतना ही महत्व होता है। मालवीय जी ने अपने जीवन में ऐसी अनेक संस्थाएं बनाई जहां राष्ट्रीय व्यक्तित्वों का निर्माण हुआ। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के बारे में तो सारी दुनिया जानती है। इसके साथ ही महामना ने और भी कई संस्थान बनाए। हरिद्वार में ऋषिकुल

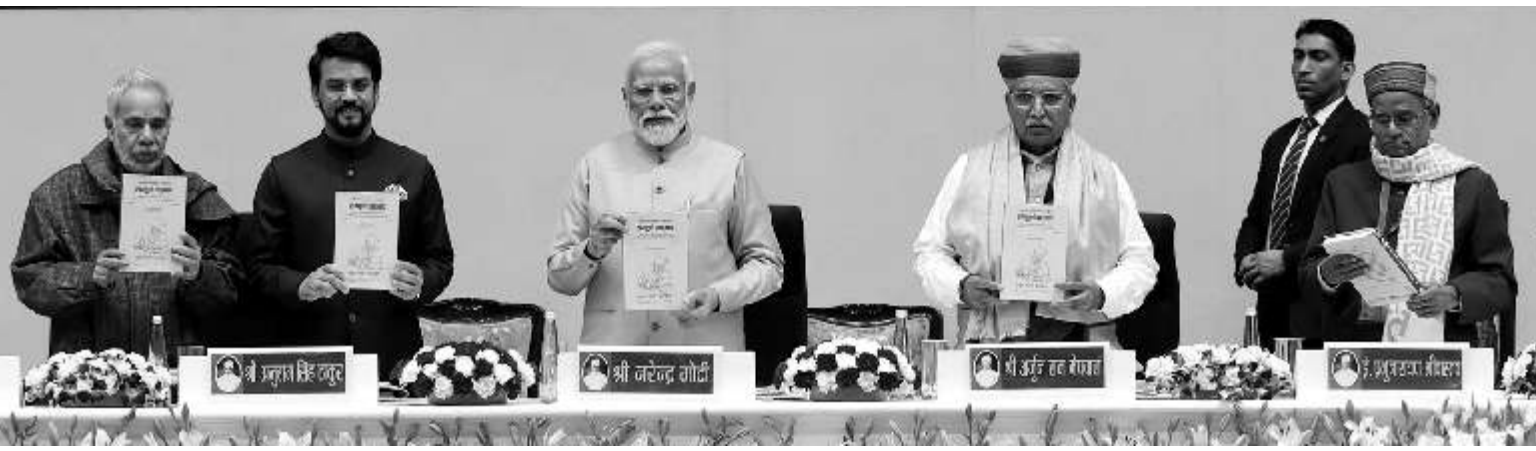

ब्रह्मचर्याश्रम हो, प्रयागराज में भारती भवन पुस्तकालय हो, या लाहौर में सनातन धर्म महाविद्यालय की स्थापना हो, मालवीय जी ने राष्ट्र निर्माण की अनेक संस्थाओं को देश को समर्पित किया। अगर हम उस दौर से तुलना करें, तो पाते हैं आज एक बार फिर भारत, राष्ट्र निर्माण की एक से बढ़कर एक संस्थाओं का सृजन कर रहा है। सहकारिता की शक्ति से देश के विकास को गति देने के लिए अलग सहकारिता मंत्रालय बनाया गया है। भारतीय चिकित्सा पद्धति के विकास के लिए केंद्र सरकार ने अलग आयुष मंत्रलय की स्थापना की है। जामनगर में WHO ग्लोबल सेंटर फॉर ट्रेडिशनल मेडिसिन की आधारशिला भी रखी गई है। श्री अन्न यानि मिलेट्स पर शोध के लिए हमने इंडियन इंस्टीटड्यूट ऑफ मिलेट्स रिसर्च का गठन किया है। ऊर्जा के क्षेत्र में वैश्विक विषयों पर चिंतन के लिए भारत ने बीते दिनों ग्लोबल बायो "यूल अलायंस भी बनाया है। International Solar Alliance हो या Coalition for Disaster Resilient Infrastructure की बात हो, ग्लोबल साउथ के लिए DAKSHIN का गठन हो या फिर India & Middle East & Europe Economic Corridor, स्पेस सेक्टर के लिए In&space का निर्माण हो या फिर नौसेना के क्षेत्र में SAGAR Initiative हो, भारत आज राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय महत्व की कई संस्थाओं का निर्माता बन रहा है। ये संस्थान, ये संस्थाएं 21वीं सदी के भारत ही नहीं बल्कि 21वीं सदी के विश्व को नई दिशा देने का काम करेंगे।

साथियो, महामना और अटल जी, दोनों एक ही विचार प्रवाह से जुड़े थे। महामना के लिए अटल जी ने कहा था– 'जब कोई व्यक्ति सरकारी मदद के बिना कुछ करने के लिए निकलेगा, तो महामना का व्यक्तित्व, उनका व्यक्तित्व, एक दीपशिखा की तरह उसका मार्ग आलोकित करेगा'। आज देश उन सपनों को पूरा करने में जुटा है जिसका सपना मालवीय जी ने, अटल जी ने, देश के हर स्वतंत्रता सेनानी ने देखा था। इसका आधार हमने सुशासन को बनाया है, गुड गवर्नेंस को बनाया है। गुड गवर्नेंस का मतलब होता है जब शासन के केंद्र में सत्ता नहीं, सत्ताभाव नहीं सेवाभाव हो। जब साफ नीयत से, संवेदनशीलता के साथ नीतियों का निर्माण हो और जब हर हकदार को बिना किसी भेदभाव के उसका पूरा हक मिले। गुड गवर्नेंस का यही सिद्धांत आज हमारी सरकार की पहचान बन चुका है।

हमारी सरकार का निरंतर प्रयास रहा है कि देश के नागरिक को मूल सुविधाओं के लिए यहां-वहां चक्कर काटने की जरूरत न पड़े। बल्कि सरकार, आज हर नागरिक के पास खुद जाकर उसे हर सुविधा दे रही है। और अब तो हमारी कोशिश है कि ऐसी हर सुविधा का सैचुरेशन हो, 100 पर्सेंट इंपलिमेंट करें। इसके लिए, देशभर में विकसित भारत संकल्प यात्रा चलाई जा रही है। आपने भी देखा होगा, मोदी की गारंटी वाली गाड़ी, देश के गांवों और शहरों तक पहुंच रही है। लाभार्थियों को मौके पर ही अनेक योजनाओं का लाभ मिल रहा है। मैं आपको एक उदाहरण देता हूं। आज केंद्र सरकार, हर गरीब को 5 लाख

रुपए तक के मुफ्त इलाज के लिए आयुष्मान कार्ड देती है। बीते वर्षों में करोड़ों गरीबों को ये कार्ड दिए गए थे। लेकिन बावजूद इसके, कई क्षेत्रों में जागरूकता की कमी की वजह से गरीबों को ये आयुष्मान कार्ड पहुंच नहीं पाए थे। अब मोदी की गारंटी वाली गाड़ी ने सिर्फ 40 दिन के भीतर देश में एक करोड़ से अधिक नए आयुष्मान कार्ड बनाए हैं, उनको खोजा है, उनको दिया है। कोई भी छूटे नहीं; कोई भी पीछे रहे नहीं; सबका साथ हो, सबका विकास हो; यही तो सुशासन है, यही तो गुड गवर्नेंस है।

साथियो, सुशासन का एक और पहलू है, ईमानदारी और पारदर्शिता। हमारे देश में एक धारणा बन गई थी कि बड़े-बड़े घोटालों और घपलों के बिना सरकारें चल ही नहीं सकतीं। 2014 से पहले, हम लाखों करोड़ रुपए के घोटालो की चर्चाएँ सुनते थे। लेकिन हमारी सरकार ने, उसके सुशासन ने आशंकाओं से भरी उन अवधारणाओं को भी तोड़ दिया है। आज लाखों करोड़ रुपए की गरीब कल्याण की योजनाओं की चर्चा होती है। गरीबों को मुफ्त राशन की योजना पर हम 4 लाख करोड़ रुपए खर्च कर रहे हैं। गरीबों को पक्के घर देने के लिए भी हमारी सरकार 4 लाख करोड़ रुपए खर्च कर रही है। हर घर तक नल से जल पहुंचाने के लिए भी 3 लाख करोड़ रुपए से ज्यादा खर्च किए जा रहे हैं। ईमानदार टैक्सपेयर की पाई-पाई जनहित में, राष्ट्रहित में लगाई जाए यही तो गुड गवर्नेंस है।

और साथियों, जब इस तरह ईमानदारी से काम होता है, नीतियाँ बनती हैं तो उसका नतीजा भी मिलता है। इसी गुड गवर्नेंस का नतीजा है कि हमारी सरकार के सिर्फ 5 वर्षों में ही साढ़े 13 करोड़ लोग गरीबी से बाहर निकले हैं।

साथियो, संवेदनशीलता के बिना गुड गवर्नेंस की कल्पना नहीं कर सकते। हमारे यहां 110 से अधिक जिले ऐसे थे, जिन्हें पिछड़ा मानकर अपने हाल पर छोड़ दिया गया था। कहा जाता था क्योंकि ये 110 जिले पिछड़े हैं, इसलिए देश भी पिछड़ा रहेगा। जब किसी अफसर को पनिशमेंट पोस्टिंग देनी होती थी, तो इन जिलों में भेजा जाता था। मान लिया गया था कि इन 110 जिलों में कुछ नहीं बदल सकता। इस सोच के साथ ना ये जिले कभी आगे बढ़ पाते और ना ही देश विकास कर पाता। इसलिए हमारी सरकार ने इन 110 जिलों को आकांक्षी जिलों- आकांक्षी जिला की पहचान दी। हमने मिशन मोड पर इन जिलों के विकास पर फोकस किया। आज यहीं आकांक्षी जिले विकास के अनेक पैरामीटर्स पर दूसरे जिलों से कहीं बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। इसी स्पिरिट को आगे बढ़ाते हुए आज हम आकांक्षी ब्लॉक्स प्रोग्राम पर काम कर रहे हैं।

साथियो, जब सोच और अप्रोच बदलती है, तो परिणाम भी मिलते हैं। दशकों तक बॉर्डर के हमारे गांवों को आखिरी गांव माना गया। हमने उन्हें देश के पहले गांव होने का विश्वास दिया। हमने सीमावर्ती गांवों में वाइब्रेंट विलेज योजना शुरू की। आज सरकार के अधिकारी, मंत्री वहां जा रहे हैं, लोगों से मिल रहे हैं। मेरी केबिनेट के मंत्रियों को मैंने _ किया था, कि जिसको अब तक आखिरी गांव कहा गया था, जिसको मैं पहला गांव कहता हूं, वहां उनको रात्रि विश्राम करना है और गए। कोई तो 17-17 हजार फिट ऊंचाई पर गए।

आज सरकार की योजनाओं का लाभ और तेजी से वहां पहुंच रहा है। ये गुड गवर्नेंस नहीं तो और क्या है? आज देश में कोई भी दुखद हादसा हो, कोई आपदा हो, सरकार तेज गति से राहत और बचाव में जुट जाती है। ये हमने कोरोना काल में देखा है, ये हमने यूक्रेन युद्ध के समय देखा है। दुनिया में कहीं भी मुश्किल हो तो देश अपने नागरिकों को बचाने के लिए युद्ध स्तर पर काम करता है। गुड गवर्नेंस के मैं ऐसे ही अनेक उदाहरण दे सकता हूं। शासन में आया ये बदलाव, अब समाज की सोच को भी बदल रहा है। इसलिए आज भारत में जनता और सरकार के बीच भरोसा ये नई बुलंदी पर है। यही भरोसा, देश के आत्मविश्वास में झलक रहा है। और यही आत्मविश्वास, आजादी के अमृतकाल में विकसित भारत के निर्माण की ऊर्जा बन रहा है।

साथियो, आजादी के अमृतकाल में हमें महामना और अटल जी के विचारों को कसौटी मानकर विकसित भारत के सपने के लिए काम करना है। मुझे विश्वास है, देश का प्रत्येक नागरिक संकल्प से सिद्धि के इस मार्ग पर अपना पूरा योगदान देगा। इसी कामना के साथ, फिर एक बार महामना के श्री चरणों में प्रणाम करते हुए मैं मेरी वाणी को विराम देता हूँ, बहुत-बहुत धन्यवाद!

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद : संविधान सभा के अध्यक्ष

डॉ. श्री भगवान सिंह

गांधी जी के साथ होकर 1917 से शुरू हुई सामाजिक सेवा तथा राजनीतिक आंदोलन की यात्रा राजेन्द्र बाबू के जीवन में उपलब्धियों के कई अवसर लाती गई। पूर्व प्रकरण में हम देख चुके हैं कि कैसे सन् 1934 तथा 1939 में उन्हें काँग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष-पद को सुशोभित करने के दो अवसर प्राप्त हुए। उन दिनों काँग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष को 'राष्ट्रपति' संबोधित किया जाता था और उनकी वही राष्ट्रव्यापी गरिमा होती थी जो स्वातंत्र्योत्तर भारत में गणतंत्र के राष्ट्रपति की होती है। किन्तु तब वह पद प्रशासन के कार्यकारी अधिकारों से शून्य हुआ करता था। देशहित में प्रशासकीय अधिकारों के क्रियान्वयन करने का पहला अवसर देश के नेताओं को 2 सितम्बर 1946 को मिला। जब लार्ड वेवल के वायसराय रहते अंतरिम सरकार का गठन हुआ। जिसके नेता यानी प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, गृहमंत्री सरदार बल्लभभाई पटेल, खाद्य एवं कृषि मंत्री डॉ. राजेन्द्र प्रसाद नियुक्त किये गये। यह अंतरिम सरकार भारत में होने वाले सत्ता-हस्तान्तरण का आगाज था जिसकी अंतिम परिणति 15 अगस्त 1947 को हुई जब अँग्रेजों ने पूर्ण रूप से भारत को सत्ता सौंप दी। बहुतेरे लोग इसे 'आजादी' मिलना कहते हैं, तो तकनीकी दृष्टि से कतिपय लोग इसे 'सत्ता का हस्तान्तरण' कहते हैं। बहरहाल, यह परिवर्तन डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के लिए एक केन्द्रीय मंत्री से भी अधिक महत्त्वपूर्ण एवं गरिमापूर्ण पद का उपहार लेकर आया जब भारतवर्ष के लिए संविधान निर्माण करने के लिए गठित की गई 'संविधान-सभा' का उन्हें अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। ध्यातव्य है, संविधान सभा का गठन भारत-वर्ष के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना थी। श्री बालकृष्ण के शब्दों में- ''अनेक आशाओं और आशंकाओं के बीच झूलते रहने के पश्चात् सन् 1946 के दिसम्बर का वह नवां दिन भी आया जब भारतीय जनता के वर्षों पुराने संकल्प के अनुसार भारत में एक सर्वप्रमुखता सम्पन्न गणतंत्र का निर्माण करने के लिए संविधान सभा समवेत हुई। देश के हर प्रदेश से चुनकर इसमें आधुनिक भारत के प्रकांड दार्शनिक और तत्त्ववेत्ता विदग्ध प्रशासक, सूक्ष्मदर्शी विधिवेत्ता और दृढ़ प्रतिज्ञ राजनयिक और क्रांतिकारी आये थे। भारत के युग युगान्तरीन इतिहास में संभवत: इससे पूर्व कभी भी एक ही सभा में इतने मनीषी एकत्र न हुए थे और न कभी ऐसा कोई अवसर आया था जब समग्र भारत के लिए उसकी

देशहित में प्रशासकीय अधिकारों के क्रियान्वयन करने का पहला अवसर देश के नेताओं को 2 सितम्बर 1946 को मिला। जब लार्ड वेवल के वायसराय रहते अंतरिम सरकार का गठन हुआ। जिसके नेता यानी प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, गृहमंत्री सरदार बल्लभभाई पटेल, खाद्य एवं कृषि मंत्री डॉ. राजेन्द्र प्रसाद नियुक्त किये गये। यह अंतरिम सरकार भारत में होने वाले सत्ता-हस्तान्तरण का आगाज था...

समस्त जनता के जनजीवन के सम्यक् संचालन और विनियमन के लिए उपयुक्त शासन-व्यवस्था तैयार करने के लिए इस प्रकार की कोई सभा बुलाई गई हो।''

संविधान सभा की पहली बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई। 1 दिसम्बर 1946 से जून 1947 तक इसकी सदस्य संख्या 389 थी। अगस्त 1947 से जनवरी 1950 तक पाकिस्तान बन जाने के बाद यह 299 सदस्यों की सभा रही। 1946 में इसका गठन विभिन्न राज्यों द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर कांग्रेस, मुस्लिम लीग, सी. पी. आई. जैसी राजनीतिक पार्टियों के चुने गये प्रतिनिधियों, देशी रियासतों के प्रतिनिधियों तथा कुछेक निर्दलीय प्रतिनिधियों को शामिल करके किया गया था। देश के लिए संविधान बनाने वाली इतनी बड़ी सभा का अध्यक्ष चुना जाना मामूली बात नहीं थी। 9 दिसम्बर 1946 को सभा की बैठक आरम्भ हुई जिसकी अध्यक्षता अंतरिम अध्यक्ष के रूप में वरिष्ठतम सदस्य डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा ने की जिनका मुख्य कार्य रहा सभी सदस्यों को शपथ दिलाना। इसके बाद 11 दिसम्बर को सभा के स्थायी अध्यक्ष के चुनाव का अवसर आया।

389 सदस्यों के बीच स्थायी अध्यक्ष के लिए दो प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये एवं स्वीकृत किये गये । इन दोनों प्रस्तावों में अध्यक्ष पद के लिए डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का नाम प्रस्तावित एवं अनुमोदित था। प्रथम प्रस्ताव के प्रस्तावक थे जे. बी. कृपलानी और अनुमोदक थे बल्लभभाई पटेल। दूसरे प्रस्ताव के प्रस्तावक थे हरे कृष्ण महताब और अनुमोदक थे नंदकिशोर दास। दो और प्रस्ताव भी प्रस्तुत किये गये किन्तु वे तकनीकी रूप से दोषपूर्ण होने के कारण खारिज कर दिये गये। अतएवं अध्यक्ष पद के लिए डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का नाम पेश करने वाले दोनों प्रस्तावों को स्वीकृत करते हुए अंतरिम अध्यक्ष ने डॉ. प्रसाद को सर्वसम्मति से संविधान सभा का अध्यक्ष चुने जाने की विधिवत घोषणा की। वस्तुतः जिस सभा में एक-से-एक बढ़कर विधिवेता, विद्वान, चिंतक, प्रतिभाधरों की बड़ी जमात थी उसमें डॉ. प्रसाद का सर्वसम्पति से अध्यक्ष चुना जाना उनके बाद में राष्ट्रपति चुने जाने से भी अधिक महत्त्वपूर्ण और गरिमापूर्ण उपलब्धि थी। उस समय न केवल काँग्रेस के, बल्कि देश के राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त नेता एवं संविधान सभा के एक सदस्य श्री कन्हैया लाल मणिकलाल मुंशी (के. एम. मुंशी) ने इस पद पर डॉ. प्रसाद के चुने जाने पर इसका महत्व इन शब्दों में प्रकट किया था- ''सन् 1946 में संविधान सभा के उद्घाटन के पूर्व उसकी अध्यक्षता के लिए कई नाम प्रस्तावित किये जा रहे थे, पर जब निर्वाचन का दिन आया, तो सबका निश्चित मत राजेन्द्र बाबू के ही पक्ष में था। सभी का यह विचार था कि केवल वे ही इस गौरवपूर्ण पद के साथ न्याय कर सकते हैं। आनन-फानन में, बिना किसी चेष्टा अथवा प्रचार के, संविधान सभा के सदस्यों में एक ऐसे वातावरण की सृष्टि हो गई कि और किसी व्यक्ति का नाम सूझता ही न था। वे संविधान-सभा के निर्विरोध अध्यक्ष निर्वाचित हुए। संविधान-सभा के अध्यक्ष के रूप राजेन्द्र बाबू ने जो कार्य किया वह अद्वितीय था। वे सर्वदा विवेक और सहिष्णुता से काम लेते रहे और जब कभी बहस में गर्मी आती तो उनकी गम्भीर मुस्कान सबको संयमित कर देती। जब भी किसी की भावना को चोट पहुँचती तो उनका मृदुल स्पर्श उसका घाव भर देता। यह राजेन्द्र बाबू की प्रौढ़ बुद्धिमानी का ही फल था कि संविधान सभा का कार्य इतने सुचारू रूप से सम्पन्न हुआ।''

उल्लेखनीय है कि संविधान सभा के अध्यक्ष चुने जाने के बाद राजेन्द्र बाबू को सभा के सदस्यों द्वारा बधाइयाँ देने का सिल-सिला शुरू हुआ। अंतरिम अध्यक्ष डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा ने सबसे पहले महान दार्शनिक-चिंतक डॉ-राधाकृष्णन को अपने भावोद्गार व्यक्त करने के लिए आमंत्रित किया। डॉ. राधाकृष्णन ने बहुत ही शानदार गरिमापूर्ण उद्बोधन देते हुए कहा कि ''राजेन्द्र बाबू अच्छाई के अवतार हैं और उनका धैर्य और शौर्य दोनों ही अथाह हैं। एक व्यक्ति में भारत की समस्त गरिमा और विभूति समाहित हो गई है। इनका जीवन त्याग और बलिदान का जीवन उदाहरण है।'' उसी अवसर पर सर गोपालस्वामी आयंगर ने अपने भाषण में कहा- ''राजेन्द्र बाबू का जीवन तो उत्सर्ग की कहानी-देश की सेवा में सब कुछ उत्सर्ग करने की कहानी है और उनकी मर्मज्ञता तथा विद्वता और मानव-जीवन और सासांरिक कार्यकलापों में उनके व्यापक अनुभव के बारे में तो कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान होगा।.... कुछ अत्यन्त उलझी और

विषम समस्याओं का मुकाबला उन्हें अवश्य करना पड़ेगा, उन्हें भी सुलझाने के लिए वे पूरी तरह से समर्थ हैं, क्योंकि इस उद्देश्य की साधना के लिए भी तो उन्हें इन्हीं गुणों की आवश्यकता पड़ेगी। जितना कुछ मैंने देखा है उससे मुझे निश्चय हो गया है कि बुद्धि और अपने ज्ञान के कारण देशवासियों के हृदयों में सम्प्रदाय, वर्ग और पंथ की भावना का ध्यान किये बिना देशवासियों के हृदय में उनका अटल स्थान बन गया है और सर्वदा बना रहेगा। उदाहरणार्थ उनका सहज सौजन्य; समस्याएँ सुलझाने का उनका ढंग जिससे वाद-विवाद में, वे लोग भी जो सहज ही उत्तेजित हो जाते हैं, शांत और निरस्त्र हो जाते हैं, मधुर उत्तर जिससे क्रोध दूर हो जाता है-ये ऐसे अनुपम गुण हैं जो उन्हें इस महान कर्त्तव्य का सफलतापूर्वक पालन करने में सहायक होंगो जो उन्होंने चाहे अनिच्छा से ही धारण कर लिया है।''

भारत कोकिला श्रीमती सरोजिनी नायडू ने यह विचार प्रकट किया ''यदि मेरे पास मधुकलश में डूबी स्वर्ण लेखनी हो तो मैं राजेन्द्र बाबू की गुणगाथा के वर्णन में किसी सीमा तक सफल हो सकूंगी, क्योंकि संसार भर की मधु रहने पर भी वह उनके गुणवर्धन के लिए पर्याप्त सिद्ध न होगी। आध्यात्मिक दृष्टि से राजेन्द्र बाबू दया, प्रज्ञा, त्याग और प्रेम के सागर महात्मा बुद्ध से ही अवतरित हुए हैं। इस सदन में लगभग हर सदस्य ने अपना दृढ़ मत व्यक्त किया है कि राजेन्द्र बाबू सभा के जनक और प्रतिपालक सिद्ध होंगे। किन्तु मैं उन्हें लपलपाती खड़्गा न मानकर ऐसा कमलधारी देवता मानती हूँ जो अपने सहज माधुर्य से जो उनके बल का ही दूसरा नाम है, जो अपनी सहज प्रज्ञा से जो उनके अनुभव का ही दूसरा स्वरूप है, और अपनी निर्मल दृष्टि से सृजनात्मक कल्पना से और श्रद्धा से मनुष्यों के हृदय को जीत लेता है।''

इस संविधान सभा में सबसे अधिक सदस्य कांग्रेस पार्टी के थे। लेकिन, जैसा कि राजमोहन गांधी लिखते हैं, काँग्रेस ने वल्लभभाई के पूर्ण समर्थन से तथा नेहरू और महात्मा जी की पूर्ण अनुमति से कई गौर काँग्रेसियों तथा काँग्रेस विरोधी रहे विधिवेत्ताओं के संविधान सभा में सम्मिलित किया था। काँग्रेस में भी के. एम. मुंशी आदि अनेक विद्वान विधिवेत्ता थे, फिर भी कांग्रेस ने अंबडेकर, एम.आर.जयकर, अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर,

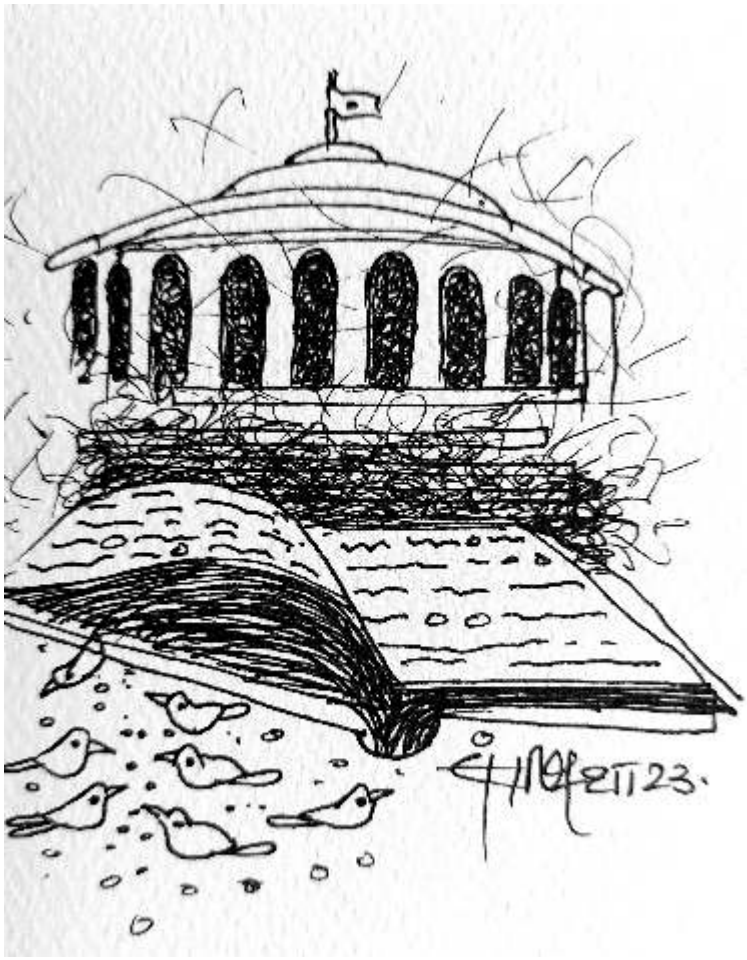

गोपालस्वामी आयंगर, हृदयनाथ कुंजरू, श्यामप्रसाद मुखर्जी खुशालदास शाह तथा फ्रेंक एन्थनी जैसे व्यक्तियों को भी संविधान निर्माण में शामिल करके कांग्रेस के बाहर के लोगों को भी उसमें सहयोगी बनाने की बुद्धिमता दिखाई। ये सब संविधान सभा के सदस्य थे। इनके अतिरिक्त संविधान सभा के अध्यक्ष राजेन्द्र प्रसाद के सलाहकार बहनेगाल नरसी राव (बी.एन.राव) को भी इसमें सम्मिलित किया गया। संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष भीमराव अंबेडकर, राजेन्द्र प्रसाद तथा इसका प्रथम प्रारूप तैयार करने वाले राव ने संविधान तैयार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।''

आज यह सर्वविदित है कि संविधान बनाने के लिए जो प्रारूप समिति बनी थी उसके अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर बनाये गये थे, लेकिन यह तथ्य आज विस्मृत कर दिया गाया है कि इसका प्रथम प्रारूप, जैसा राजमोहन गांधी ने लिखा है, बी.एन. राव ने तैयार किया था। दरअसल, डॉ.

अम्बेडकर का संविधान सभा का सदस्य बनना भी कुछ नाटकीय अंदाज का था। जब सभी प्रांतों की विधायिकाओं द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर संविधान सभा के सदस्यों का निर्वाचन कराया गाया, तो डॉ. अम्बेडकर तथा उनके अन्य दलित उम्मीदवार महाराष्ट्र से चुनाव नहीं जीत सके थे। तब वे बंगाल से अनुसूचित जाति के सहयोग से चुनाव जीत कर आये और संविधान सभा के सदस्य बने। लेकिन इस सदस्यता पर भी उस वक्त संकट आ खड़ा हुआ जब 1947 में देश का बंटवारा हो जाने पर बंगाल का एक भाग, जहाँ से डॉ. अम्बेडकर निर्वाचित हुए थे, पूर्वी पाकिस्तान के नाम से अलग हो गया।

ऐसे में उनकी संविधान सभा की सदस्यता स्वत: समाप्त हो गई। लेकिन उनकी संविधान संबंधी जानकारी तथा काबिलियत को देखते हुए उनका सदस्य न रहना सभी को अखरने लगा। ऐसे में संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने महाराष्ट्र के जैसा कि मंगलमूर्ति जी लिखते हैं – ''मुख्यमंत्री बी.जी. खेर को तत्काल पत्र लिख कर डॉ. अम्बेडकर को वहाँ से निर्वाचित करके भेजने का अनुरोध किया ताकि उन्हें संविधान सभा का सदस्य पुन: बनाया जा सके क्योंकि उनकी सेवाएँ भी इतनी महत्त्वपूर्ण हैं कि उससे संविधान सभा को वंचित नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रकार डॉ. अम्बेडकर जुलाई 1947 में बम्बे से संविधान सभा के सदस्य रूप में पुन: निर्वाचित हुए और 15 अगस्त 1947 को भारत के प्रथम विधिमंत्री के रूप में कैबिनेट में सम्मिलित किये गए। लेकिन उन्हें संविधान की प्रारूप समीति का अध्यक्ष बनाया जाय, इसे लेकर काँग्रेस में असमंजस था। प्रसिद्ध ब्रिटिश विधिवेत्ता सर आइवर जेनिंगस को गंभीरतापूर्वक इस काम के लिए उपयुक्त समझा जा रहा था। लेकिन गांधीजी ने हस्तक्षेप करते हुए कहा कि किसी विदशी को इस पद पर बैठाने के बजाय डॉ. अम्बेडकर को प्रारूप समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया जाना चाहिए। फलस्वरूप 30 अगस्त 1947 को प्रारूप समिति की पहली बैठक में डॉ. अम्बेडकर को सर्वसम्मति से उसका अध्यक्ष चुना गया।''

इस प्रारूप समिति में डॉ. अम्बेडकर के अतिरिक्त अन्य महत्वपूर्ण सदस्य थे – सर अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर, के. एम मुंशी, मोहम्मद सादुल्ला, बी. एल. मित्तर और डी. पी. खेतान। बी. एल. मित्तर ने खराब सेहत के कारण त्यागपत्र दे दिया तो उनकी जगह पर एन. माधव राव को रखा गया। 1948 में डी. पी. खेतान का निधन हो जाने पर उनकी जगह पर टी.टी. कृष्णनामचारी को रखा गया। इस प्रकार सात सदसीय प्रारूप समिति की बैठके डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में होने लगीं। ''इसकी 27 अक्टूबर 1947 से जो बैठकें शुरू हुई। वे 13 फरवरी 1948 तक चलीं। इन बैठकों में प्रारूप समिति के सदस्यों का काम रहा संविधान का मसविदा यानी ढाँचा तैयार करना और यह मसविदा सभा के अध्यक्ष को 24 फरवरी 1948 को सौंपा गया। फिर इस प्रारूप को संविधान सभा में तथा सार्वजनिक रूप से बहस के लिए प्रस्तुत किया गया जो 4 नवम्बर 1948 से 15 नवम्बर 1948 तक चला। प्रारूप का तीसरा वाचन 17 नवम्बर से शुरू होकर 26 नवम्बर 1949 तक चला। जब संविधान के अंतिम रूप को डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया जिसे पूरे सदन ने हर्षोल्लास से अंगीकार किया।''

दरअसल प्रारूप समिति के सदस्य संविधान का जो प्रारूप–मसविदा तैयार करते, वह संविधान सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाता और उसमें उल्लेखित प्रावधानों पर सदस्यों के बीच सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में खूब खुल कर बहस होती। बहुत सारे सदस्यों के मतान्तर सामने आते और अन्तत: हरेक अनुच्छेद, प्रावधान पर एक राय बनाकर उसे अंतिम रूप दिया जाता। प्रारूप में उल्लेखित कई प्रावधानों, अनुच्छेदों में संशोधन किये जाते, कुछ के स्थान पर नये प्रावधान कायम किये जाते। ऐसा कभी नहीं हुआ कि संविधान सभा के अध्यक्ष या प्रारूप समिति के अध्यक्ष ने जो अकेले चाहा, वही संविधान में लिख दिया गया। राजमोहन गांधी बताते हैं – ''संसद के नेता एवं विभिन्न समितियों के अध्यक्ष होने के नाते नेहरू और पटेल का भी इसमें पूर्ण योगदान रहा। अल्पसंख्यकों के मूल अधिकारों तथा प्रांतों के संविधान के संबंध में विचार करने वाली समितियों उपसमितियों का काम वल्लभभाई देखते थे। उनके आग्रह पर केन्द्र सरकार को सबल बनाने के लिए संविधान में धारा 354 तथा धारा

356 जोड़ी गई। इस धारा के द्वारा संघ सरकार को किसी भी राज्य का शासन संभालने तथा यह निश्चित करने का दायित्व सौंपा गया कि राज्यों के कार्य संवैधानिक विधि से हो रहे हैं या नहीं।... पटेल की शक्ति सम्पन्न केन्द्र सरकार विषयक परिकल्पना में प्रधानमंत्री के सर्वसत्ताधीश होने का विचार शामिल नहीं था, इसलिए जब संघ सरकार की सत्ता संबंधी नेहरू की अध्यक्षता वाली समिति ने भारत के राष्ट्रपति का चुनाव केन्द्रीय सभासदों द्वारा किये जाने का प्रस्ताव रखा तो सरदार ने उस पर आपत्ति की। उसके बाद नेहरू और पटेल की समितियों की संयुक्त बैठक हुई और उसमें तय किया गया कि राष्ट्रपति का चुनाव संसद सदस्य और राज्यों के विधायक एक साथ करेंगे, लेकिन सांसदों के मतों का मूल्य अधिक माना जाएगा।''

''संविधान सभा की चर्चा के समय व्यक्ति-स्वातंत्रय का अत्यधिक आग्रह करने वाले नेहरू भूमि-स्वामित्व के अधिकार को मानने को तैयार नहीं थे। सरदार के अंदर का किसान भू-स्वामियों की भूमि बिना कोई मूल्य चुकाये ले लेने के विचार का प्रबल विरोध कर उठा। मुआवजा पाने के अधिकार को संविधान में समाविष्ट करने के साथ ही नागरिकों को उचित मुआवजा न मिलने पर इसकी शिकायत न्यायालय में करने का निर्णय करना काँग्रेस दल अथवा संविधान सभा के लिए अत्यन्त कठिन था। वल्लभभाई का स्पष्ट मत था कि ये दोनों अधिकार मिलने चाहिए। उनके मतानुसार मुआवजे के बिना संपत्ति पर कब्जा करना 'चोरी' और 'लूट' के समान माना जाएगा। लम्बी और आवेशपूर्ण चर्चाओं के बाद उनके दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया गया, हालांकि उनके बनाये हुए प्रारूप को बदल दिया गया।''

''पटेल ने राजाओं को वचन दिया था कि अपना राज्य सौंपने के बदले में उन्हें शाही भत्ता (प्रिवीपर्स) दिया जाएगा तथा इस प्रावधान को संविधान में समाविष्ट किया जाएगा और यह कर भी लिया गया। जवाहरलाल ने प्रश्न उठाया कि भावी सरकारों पर ऐसा दायित्व सौंपना उचित होगा या नहीं? इस संबंध में सरदार का स्पष्ट मत था कि ''ऐसा न करना विश्वासघात माना जाएगा।'' अन्त में नेहरू ने सरदार की बात मान ली और संविधान की धारा 267 'अ' में सरदार के वचन की प्रतिपूर्ति की गई।.... सरकारी कर्मचारियों विषयक दो धाराओं में भी सरदार को बीच में हस्तक्षेप करना पड़ा। धारा 311 के अनुसार राजनीतिक नेताओं के लिए सरकारी अधिकारियों को सजा देना कठिन हो गया। स्वतंत्रतापूर्व वल्लभभाई ने यहवचन दिया था कि भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों के अधिकार और सेवा शर्तें यथावत रहेंगे। धारा 314 द्वारा इसकी पुष्टि की गई। इन दोनों धाराओं को लेकर काफी टीका-टिप्पणी हुई क्योंकि स्वातंत्र आंदोलन के समय जिन अधिकारियों ने संविधान सभा के अनेक सदस्यों को जेल में डाला था, इन धाराओं द्वारा उन्हीं अधिकारियों को संरक्षण मिल रहा था। इस विवाद में सरदार ने हस्तक्षेप करते हुए कहा ''मैं इस सदन में उल्लेख करना चाहता हूँ कि पिछले दो-तीन वर्षों में यदि अधिकोष सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों ने देशभक्ति और निष्ठा के साथ अपनी सेवाएँ न दी होती तो यह संघ टूट गया होता। यदि आपको सरकारी सेवकों के इस तंत्र की आवश्यकता नहीं है अथवा इसे समाप्त करने का निर्णय लेना हो, तो मैं भी इन सरकारी सेवकों के साथ ही चला जाऊँगा। ये सब समर्थ व्यक्ति हैं और अपनी आजीविका चला लेंगे।'' इस भाषण के बाद सारा विरोध ठंडा पड़ गया। वल्लभभाई द्वारा भारतीय सिविल सेवा अधिकारियों (आई. सी. एस.) का बचाव

''संविधान सभा की चर्चा के समय व्यक्ति-स्वातंत्रय का अत्यधिक आग्रह करने वाले नेहरू भूमि-स्वामित्व के अधिकार को मानने को तैयार नहीं थे। सरदार के अंदर का किसान भू-स्वामियों की भूमि बिना कोई मूल्य चुकाये ले लेने के विचार का प्रबल विरोध कर उठा। मुआवजा पाने के अधिकार को संविधान में समाविष्ट करने के साथ ही नागरिकों को उचित मुआवजा न मिलने पर इसकी शिकायत न्यायालय में करने का निर्णय करना काँग्रेस दल अथवा संविधान सभा के लिए अत्यन्त कठिन था। वल्लभभाई का स्पष्ट मत था कि ये दोनों अधिकार मिलने चाहिए। उनके मतानुसार मुआवजे के बिना संपत्ति पर कब्जा करना 'चोरी' और 'लूट' के समान माना जाएगा।

करने तथा उसके बाद इसके स्थान पर भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) और भारतीय पुलिस सेवा (आई. पी. एस.) ढाँचा खड़ा करने में दिये गये योगदान के कारण वे देश के समस्त अधिकारियों के 'पूज्य और संरक्षक' बन गये।''

इन उल्लेखित बातों का कोई वास्ता डॉ. प्रसाद से नहीं है, फिर भी संक्षेप में इनका उल्लेख इसलिए किया गया ताकि यह तथ्य सबके सामने आये कि संविधान के निर्माण मे पटेल, नेहरू जैसे नेताओं की अहम भूमिका रही, इसलिए वह सिर्फ प्रारूप समिति के अध्यक्ष की बुद्धि और प्रतिभा की पैदाइश नहीं है। अब हम कुछ उन बातों की चर्चा करेंगे जिनसे डॉ. प्रसाद और अन्य सदस्यों की संविधान निर्माण में सहभागिता उजागर होती है।

ऐसा नहीं हुआ कि प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने संविधान के प्रारूप स्वरूप जो कुछ प्रस्तावित करने गये, उन्हें ज्यों का त्यों सदस्यों द्वारा स्वीकृत किया जाता रहा। मसलन, 4 नवम्बर 1948 को संविधान सभा का सातवां सत्र शुरू होने पर डॉ-अम्बेडकर ने संविधान प्रारूपों में ग्राम-गणराज्य (Village Republics) की अवधारणा को खारिज करते हुए 'मजबूत केन्द्र' के पक्ष में अपना अभिमत रखा। उल्लेखनीय है कि गांधी जी स्वाधीनता आंदोलन के दौरान हमेशा अपने 'सपनों के भारत' में ग्राम-स्वराज्य स्थापित करने पर जोर देते रहे थे। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा कई अन्य सदस्य ग्राम-स्वराज्य को संभव बनाने के लिए संविधान के प्रावधानों में इसे समाविष्ट करने के पक्ष में थे। ग्राम-पंचायतों (Village Republics) को महत्त्व देना डॉ. अम्बेडकर ठीक नहीं मानते थे। उनका कहना था कि ''गाँव पंचायतें (Village Republics) 'भारत का विध्वंस' का कारण (Ruination of India) रही हैं - गांव हैं क्या - स्थानीयता के नाबदान, अज्ञान, दिमागी संकीर्णता और साम्प्रदायिकता के मांद (A sink of localism, a den of ignorance, narrow mindedness and communalism) मुझे खुशी है कि प्रारूप संविधान ने गांव के बजाय व्यक्ति को इकाई के रूप में स्वीकार किया हैं।''

गाँवों के संबंध में डॉ. अम्बेडकर की इस राय का कतिपय सदस्यों द्वारा प्रबल विरोध हुआ। केन्द्र को मजबूत बनाने, तो दूसरी तरफ गांवों को नजरअंदाज करने वाली आम्बेडकर की मान्यता का विरोध करते हुए प्रारूप समिति के एक विशिष्ट सदस्य अल्लादि कृष्ण स्वामी अय्यर ने कहा - ''मैं अपने सम्मानीय मित्र (डॉ. अम्बेडकर) के गाँवों के भर्त्सना विषयक विचारों से सहमत नहीं हूँ। मैं उनके इस विचार से अपनी जबर्दस्त असहमति व्यक्त करता हूँ कि लोकतंत्र भारत की जमीन पर एक ऊपरी आवरण (Top dressing on Indian soil) की तरह है।'' श्री अय्यर के अतिरिक्त संविधान सभा के अरूण चंद्र गुहा दामोदर स्वरूप सेठ, के. हनुमन्तैया, शिब्बनलाल सक्सेना, एच. वी. कामथ, के टी. शाह जैसे कई सदस्यों ने डॉ. अम्बेडकर की ग्राम विषयक निंदाजनक अवधारणा का जबर्दस्त प्रतिवाद किया। ये सभी गांधी के गाँव संबंधी विचारों के अनुरूप, जिसमें मानना था कि 'भारत की आत्मा गांवों में बसती हैं संविधान में ग्राम पंचायत प्रणाली के स्थान देना चाहते थे। काफी गर्मागर्म बहस के बाद 22 नवम्बर 1948, संविधान सभा के एक सदस्य कें-संथानाम ने 31, के रूप में एक संशोधन पेश किया कि ''राज्य ग्राम पंचायत संगठित करने के लिए कदम उठायेगा और उन्हें स्वशासन (Self goverment) की ईकाई के रूप में सक्षम बनाने में सहायक होगा। यह संशोधन तब डॉ. अम्बेडकर की सहमति से अंगीकृत किया गया। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पूरी तरह से इस संशोधन के पक्ष में थे, क्योंकि गाँवों के संबंध में उनका नजरिया डॉ. अम्बेडकर जैसा नकारात्मक नहीं था, बल्कि गांधी जैसा सकरात्मक था। डॉ. प्रसाद का मानना था कि ग्रामीण लोगों में भी बुद्धिमता और लोकाचार का ज्ञान होता है, उनके पास भी एक संस्कृति है जिसे नफीस (Sophisticated) लोग पंसद नहीं करेंगे, लेकिन वह बहुत ठोस (Solid) होती है। मैं उन्हें उन कार्मिकों से ज्यादा बुद्धिमान समझता हूँ जो कारखाने में काम करते हुए एक मशीन का पुर्जा बन कर रह जाते हैं।'' डॉ. अम्बेडकर के न चाहते हुए भी डॉ. प्रसाद तथा अन्य सदस्यों के हस्तक्षेप के स्वरूप संविधान में 'पंचायती राज्य व्यवस्था' को 'राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों' (Directive Principles Of State Policy) के अन्तर्गत समाविष्ट किया गया।

संविधान-सभा के अध्यक्ष के रूप में प्रारूप-स्वरूप के कुछेक मुद्दों पर डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के निजी विचारों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। बालकृष्ण (प्रथम राष्ट्रपति के प्रेस सचिव) लिखते हैं - ''यद्यपि सभा का कार्य बहुत कुछ सरल और संयत हो गया था किन्तु उसके कार्य-संचालन में तब भी अध्यक्ष को अपना व्यवहार ऐसा रखना पड़ता था कि किसी भी सदस्य को यह कहने का अवसर न मिले कि अध्यक्ष महोदय उसे अपनी बात कहने से रोक रहे हैं अथवा उसके विरूद्ध पक्षपातपूर्ण बात कर रहे हैं। वास्तव में राजेन्द्र बाबू ने एक क्षण के लिए भी किसी व्यक्ति को यह प्रतिवाद करने का अवसर दिया ही नहीं। सभा के समक्ष कई बार ऐसी प्रस्थापनाएँ रखी गई जिन्हें सभा के अधिकांश सदस्य देश के लिए हानिकर मानते थे और जिन्हें स्वयं राजेन्द्र बाबू भी अच्छा न समझते थे। किन्तु ऐसे अवसरों पर भी राजेन्द्र बाबू ने ऐसी अप्रिय प्रस्तावनाओं के करने वालों को अपनी बात कहने का पूरा-पूरा अवसर दिया। संविधान-सभा के समवेत होने के तीन-चार दिवस के पश्चात् पंडित जवाहरलाल नेहरू ने संविधान के मौलिक सिद्धान्तों संबंधी एक संकल्प का प्रारूप सभा के समक्ष अनुमोदनार्थ रखा। श्री एम.आर. जयकर ने इस प्रारूपित संकल्प में यह संशोधन करने की प्रस्थापना सभा के समक्ष रखी कि उस पर कुछ माह तक विचार न किया जाए। डाक्टर जयकर का यह प्रस्ताविक संशोधन सभा के अन्य सभी सदस्यों को तनिक भी रूचिकर न लगा। वे इसे देश के लिए घातक मानते थे। अनेक सदस्यों ने डॉक्टर जयकर के इस प्रस्तावित संशोधन पर अनेक आपत्तियाँ उठाई और प्रयास किया कि उन्हें बोलने ही न दिया जाए। किन्तु राजेन्द्र बाबू ने दृढ़ता के साथ डॉक्टर जयकर को इस बात का पर्याप्त अवसर प्रदान किया कि वे अपनी बात सभा के समक्ष पूरी तरह से रख सकें। 15 एक अन्य अवसर पर बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अध्यक्ष महोदय से निवेदन किया कि उन्हें विश्वसनीय सूत्रों से पता चला है कि सिक्कों पर भारतीय अंक नहीं दिये जा रहे हैं और उन्होंने यह प्रार्थना की कि वे इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर सभा में विचार किये जाने की अनुमति प्रदान करें। यद्यपि राजेन्द्र बाबू को हिन्दी और नागरीअकों से प्रेम था, किन्तु क्योंकि वह प्रश्न सभा के कार्यक्षेत्र के बाहर का था, इसलिए राजेन्द्र बाबू ने निजी अभिरूचि होते हुए भी उस प्रश्न को सभा के समक्ष रखने की अनुमति नहीं दी।''[15]

संविधान-सभा के अध्यक्ष के रूप में राजेन्द्र बाबू ने एक अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य जनवाणी को राजकाज में उचित स्थान दिलवाने के संबंध में भी किया। पूर्वोक्त लेख में ही बालकृष्ण जी बताते हैं -''संविधान सभा के जितने भी प्रभावशाली सदस्य थे उनमें से एक का भी ध्यान इस बात पर न गया था कि स्वतंत्र भारत का संविधान भारतीयों की ही किसी जनवाणी में बनना चाहिए। सच बात तो यह थी कि उन सब सदस्यों की शिक्षा-दीक्षा अंग्रेजी द्वारा हुई थी, अंत: अंग्रेजी भाषा उनके रक्तमांस मे घुलमिल गई थी। वे अपनी बात जिस सरलता से अँग्रेजी में व्यक्त कर सकते थे, उतनी सरलता से उसे अपनी मातृभाषा में नहीं कर सकते थे। अत: वे सब यह मान बैठे थे कि भारत का संविधान केवल अंग्रेजी भाषा में ही बन सकता है। यद्यपि राजेन्द्र बाबू की भी शिक्षा अँग्रेजी माध्यम द्वारा हुई थी और उन्होंने स्नातकोत्तर डिग्री के लिए अँग्रेजी विषय ही लिया था, तथापि उनको यह बात एक ऐतिहासिक विडम्बना लगी कि स्वतंत्र भारत का संविधान किसी भारतीय भाषा में न होकर अँग्रेजी भाषा में हो। अत: उन्होंने संविधान सभा से यह निवेदन किया कि उनके विचार में राष्ट्रीय गौरव और गरिमा की दृष्टि से यही उचित होगा कि स्वतंत्र भारत का संविधान किसी भारतीय जनवाणी में ही बने। काँग्रेस अनेक वर्षो से यह बात कह रही थी कि स्वतंत्र भारत की राजभाषा हिन्दी होनी चाहिए। अत: राजेन्द्र बाबू का भी यह मत था कि स्वतंत्र भारत का संविधान हिन्दी भाषा में बने। सभा ने उनके इस मत का समर्थन करतल ध्वनि से किया। राजेन्द्र बाबू अपना विचार प्रकट करके ही संतुष्ट न हो गये वरन उन्होंने तुरंत ही उसको कार्यान्वित करने के लिए कदम भी उठाये। संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए पहले से ही सभा ने एक प्रारूप समिति गठित कर दी थी। राजेन्द्र बाबू का विचार था कि जैसे-जैसे यह प्रारूप समिति संविधान का प्रारूप तैयार करे वैसे-वैसे उसका हिन्दी पाठ भी तैयार होता जाए। किन्तु यह कार्य सहजन था।''[16]

दरअसल इस कार्य के सहज न होने का मुख्य कारण था कि संविधान का मूल आधार तो वे तत्व थे जिनका प्रतिपादन इंग्लैंड और अन्य यूरोपीय देशों तथा संयुक्त राज्य

अमेरिका में हुआ था। स्वभावत: उन राजनीतिक संस्थाओं, मान्यताओं और तत्वों को इंगलैंड और अमेरिका में जिन शब्दों में व्यक्त किया गया था उन्हीं शब्दों के प्रयोग से संविधान का प्रारूप तैयार किया जा रहा था। अतएव बहुतों का मानना था कि चूँकि वहाँ की संविधानिक शब्दावली के लिए हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा में पर्यायवाची शब्दों का अभाव है, जिसके कारण संविधानिक प्रावधानों को सही-सही अभिव्यक्ति नहीं दी जा सकती, इसलिए अँग्रेजी भाषा में ही संविधान तैयार किया जा सकता है। लेकिन डॉ. प्रसाद का मानना था कि भारतीय भाषाओं के माध्यम द्वारा सूक्ष्म-से-सूक्ष्म तथ्य अभिव्यक्त किये जा सकते हैं और नये-नये तथ्यों की अभिव्यक्ति के लिए समुचित शब्द गढ़ लेने की पूरी शक्ति भारतीय भाषाओं में विद्यमान है। इसलिए, जैसा कि बालकृष्ण बताते हैं, ''अँग्रेजी राजनीतिक और विधिक दर्शन की दृष्टि से बनने वाले संविधान के प्रारूप के हिन्दीकरण के लिए और उसमें प्रयुक्त विशेषार्थक और पारिभाषिक शब्दों के लिए भारतीय भाषाओं में उचित पर्याय निर्मित करने के लिए उन्होंने एक समिति की स्थापना कर दी। इस समिति के अध्यक्ष श्री घनश्याम सिंह गुप्त बनाये गये। गुप्त जी उन दिनों मध्यप्रदेश की विधानसभा के अध्यक्ष थे और संविधान सभा के भी सदस्य थे। समिति के अन्य सदस्यों में श्री हरि भाऊ उपाध्याय, श्री कमलापति त्रिपाठी, डॉ. नगोन्द्र, आचार्य रघुवीर थे।''[17]

संविधान का हिन्दी प्रारूप बनाने के लिए राजेन्द्र बाबू ने समिति तो गठित कर दी, किन्तु उस समिति ने जो हिन्दी प्रारूप तैयार कियाए उसकी भाषिक संरचना संविधान सभा के कतिपय सदस्यों को अरूचिकर लगी। बालकृष्ण जी बताते हैं- ''जब भारत के संविधान के प्रारूप का हिन्दी पाठ प्रकाशित हुआ तो कुछ प्रभावशाली राजनीतिज्ञ नाराज हुए ही, साथ ही कुछ हिन्दी के समर्थक भी उसमें प्रयुक्त संस्कृतनिष्ठ भाषा से अत्यन्त अप्रसन्न हो। अत: किसी को इस शिकायत का मौका न था कि शब्दों का चयन एकांगी ढंग से किया गाया है। इससे पूर्व कि संविधान का हिन्दी पाठ मुद्रित और प्रकाशित किया जाए अध्यक्ष महोदय ने यह इच्छा प्रकट की कि वह उन्हें दिखा दिया जाए। अत: श्री घनश्याम सिंह गुप्त और इन पंक्तियों का लेखक उस अनुवाद को लेकर वर्धा गये जहाँ राजेन्द्र बाबू उन दिनों विश्राम कर रहे थे। किन्तु हिन्दी के प्रति उनकी लगन इतनी गहरी थी कि पूर्णत: स्वस्थ न होने पर भी उन्होंने उसे शब्दश: पढ़ा और कुछ स्थानों पर संशोधन भी सुझाए। जब उन्होंने पूरी तरह देखकर अनुमोदित कर दिया तभी वह मुद्रण के लिए भेजा गया। साथ ही राजेन्द्र बाबू ने यह प्रबंध भी किया कि मुद्रित होने पर यह अनुवाद संविधान सभा के समक्ष उसकी समिति की रिपोर्ट के तौर पर रखा जाए और सभा उस रिपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[18]

गाये और उन्होंने पं. जवाहरलाल नेहरू और राजेन्द्र बाबू को पत्र लिख कर अपनी अप्रसन्नता प्रकट की। राजेन्द्र बाबू वा दिया था। किन्तु जब हिन्दी के ही प्रमुख नेताओं और लेखकों ने प्रारूप के हिन्दी पाठ का कटु शब्दों में विरोध किया तब उन्हें यह विचार छोड़ देना पड़ा।...किन्तु राजेन्द्र बाबू ने तब भी यह प्रयास जारी रखा कि यदि संविधान का मूल पाठ हिन्दी में उपलब्ध नहीं किया जा सकता तो कम-से-कम उसका प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद तो उपलब्ध कर ही देना चाहिए। इस उद्देश्य की साधना की दृष्टि से उन्होंने एक विशेषज्ञ अनुवाद समिति की स्थापना की और इसमें हिन्दीतर भाषाओं के भी प्रतिनिधि सदस्य बनाये। डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या भी उन सदस्यों में से एक थे। इस समिति ने संविधान का हिन्दी अनुवाद अंग्रेजी

पाठ के तैयार होते रहने के साथ ही साथ तैयार कर दिया। अंग्रेजी पाठ का अंतिम रूप 26 नवम्बर 1949 को तैयार हुआ और उसी दिन तक उसका हिन्दी अनुवाद भी तैयार कर दिया गया। इस अनुवाद में अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के लिए उन्हीं पर्यायों का प्रयोग किया गया था जो भाषा विशेषज्ञों के सम्मेलन में तय पाये गए थे। यह सम्मेलन राजेन्द्र बाबू ने इस उद्देश्य से बुलाया था जिन भाषाओं का उल्लेख संविधान की अष्टम अनुसूची में किया गया है उन सबमें एक समान संविधानिक और विधि शब्दावली का प्रयोग किया जाए। इस सम्मेलन में उन भाषाओं के दो-दो विशिष्ट प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। साथ ही सम्मेलन के सब निर्णय सर्वसम्मति से किये गए थे। अत: किसी को इस शिकायत का मौका न था कि शब्दों का चयन एकांगी ढंग से किया गाया है। इससे पूर्व कि संविधान का हिन्दी पाठ मुद्रित और प्रकाशित किया जाए अध्यक्ष महोदय ने यह इच्छा प्रकट की कि वह उन्हें दिखा दिया जाए। अत: श्री घनश्याम सिंह गुप्त और इन पंक्तियों का लेखक उस अनुवाद को लेकर वर्धा गये जहाँ राजेन्द्र बाबू उन दिनों विश्राम कर रहे थे। किन्तु हिन्दी के प्रति उनकी लगन इतनी गहरी थी कि पूर्णत: स्वस्थ न होने पर भी उन्होंने उसे शब्दश: पढ़ा और कुछ स्थानों पर संशोधन भी सुझाए। जब उन्होंने पूरी तरह देखकर अनुमोदित कर दिया तभी वह मुद्रण के लिए भेजा गया। साथ ही राजेन्द्र बाबू ने यह प्रबंध भी किया कि मुद्रित होने पर यह अनुवाद संविधान सभा के समक्ष उसकी समिति की रिपोर्ट के तौर पर रखा जाए और सभा उस रिपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[19]

भी किया कि मुद्रित होने पर यह अनुवाद संविधान सभा के समक्ष उसकी समिति की रिपोर्ट के तौर पर रखा जाए और सभा उस रिपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[20]

का यह विचार था कि जब सभा संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद और खंड पर अपना विचार प्रारम्भ करेगी तब उसके समक्ष हिन्दी पाठ भी रख दिया जाएगा जिससे वह उस पर भी विचार कर ले और उसे स्वीकृत कर ले। इसी दृष्टि से उन्होंने डॉ. रघुवीर को सभा का सदस्य भी निर्वाचित करवा दिया था। किन्तु जब हिन्दी के ही प्रमुख नेताओं और लेखकों ने प्रारूप के हिन्दी पाठ का कटु शब्दों में विरोध किया तब उन्हें यह विचार छोड़ देना पड़ा।... किन्तु राजेन्द्र बाबू ने तब भी यह प्रयास जारी रखा कि यदि संविधान का मूल पाठ हिन्दी में उपलब्ध नहीं किया जा सकता तो कम-से-कम उसका प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद तो उपलब्ध कर ही देना चाहिए। इस उद्देश्य की साधना की दृष्टि से उन्होंने एक विशेषज्ञ अनुवाद समिति की स्थापना की और इसमें हिन्दीतर भाषाओं के भी प्रतिनिधि सदस्य बनाये। डॉ. सुनीति कुमार चट्टर्जी भी उन सदस्यों में से एक थे। इस समिति ने संविधान का हिन्दी अनुवाद अंग्रेजी पाठ के तैयार होते रहने के साथ ही साथ तैयार कर दिया।

अंग्रेजी पाठ का अंतिम रूप 26 नवम्बर 1949 को तैयार हुआ और उसी दिन तक उसका हिन्दी अनुवाद भी तैयार कर दिया गया। इस अनुवाद में अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के लिए उन्हीं पर्यायों का प्रयोग किया गया था जो भाषा विशेषज्ञों के सम्मेलन में तय पाये गए थे। यह सम्मेलन राजेन्द्र बाबू ने इस उद्देश्य से बुलाया था जिन भाषाओं का उल्लेख संविधान की अष्टम अनुसूची में किया गया है उन सबमें एक समान सांविधानिक और विधि शब्दावली का प्रयोग किया जाए। इस सम्मेलन में उन भाषाओं के दो-दो विशिष्ट प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। साथ ही सम्मेलन के सब निर्णय सर्वसम्मति से किये गए थे। अत: किसी को इस शिकायत का मौका न था कि शब्दों का चयन एकांगी ढंग से किया गाया है। इससे पूर्व कि संविधान का हिन्दी पाठ मुद्रित और प्रकाशित किया जाए अध्यक्ष महोदय ने यह इच्छा प्रकट की कि वह उन्हें दिखा दिया जाए। अत: श्री घनश्याम सिंह गुप्त और इन पंक्तियों का लेखक उस अनुवाद को लेकर वर्धा गये जहाँ राजेन्द्र बाबू उन दिनों विश्राम कर रहे थे। किन्तु हिन्दी के प्रति उनकी लगन इतनी गहरी थी कि पूर्णत: स्वस्थ न होने पर भी उन्होंने उसे रपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[21]

के लिए उन्हीं पर्यायों का प्रयोग किया गया था जो भाषा विशेषज्ञों के सम्मेलन में तय पाये गए थे। यह सम्मेलन राजेन्द्र बाबू ने इस उद्देश्य से बुलाया था जिन भाषाओं का उल्लेख संविधान की अष्टम अनुसूची में किया गया है उन सबमें एक समान सांविधानिक और विधि शब्दावली का प्रयोग किया जाए। इस सम्मेलन में उन भाषाओं के दो-दो विशिष्ट प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। साथ ही सम्मेलन के सब निर्णय सर्वसम्मति से किये गए थे। अत: किसी को इस शिकायत का मौका न था कि शब्दों का चयन एकांगी ढंग से किया गाया है। इससे पूर्व कि संविधान का हिन्दी पाठ मुद्रित और प्रकाशित किया जाए अध्यक्ष महोदय ने यह इच्छा प्रकट की कि वह उन्हें दिखा दिया जाए। अत: श्री घनश्याम सिंह गुप्त और इन पंक्तियों का लेखक उस अनुवाद को लेकर वर्धा गये जहाँ राजेन्द्र बाबू उन दिनों विश्राम कर रहे थे। किन्तु हिन्दी के प्रति उनकी लगन इतनी गहरी थी कि पूर्णत: स्वस्थ न होने पर भी उन्होंने उसे रपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[22]

शब्दश: पढ़ा और कुछ स्थानों पर संशोधन भी सुझाए। जब उन्होंने पूरी तरह देखकर अनुमोदित कर दिया तभी वह मुद्रण के लिए भेजा गया। साथ ही राजेन्द्र बाबू ने यह प्रबंध भी किया कि मुद्रित होने पर यह अनुवाद संविधान सभा के समक्ष उसकी समिति की रिपोर्ट के तौर पर रखा जाए और सभा उस रिपोर्ट को स्वीकार कर लें। 24 जनवरी, 1950 को ऐसा हुआ भी और संविधान के अंग्रेजी पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न

होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।''[23]

पाठ के साथ इस हिन्दी अनुवाद पर भी संविधान सभा के प्रत्येक सदस्य के हस्ताक्षर हुए। संस्कृत अनुवाद भी उन्हीं के आदेश पर तैयार कराया गया। यह कहना अनुचित न होगा कि वह संस्कृत अनुवाद बीसवीं शताब्दी के महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रंथों में से एक है। संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं में भी उन्हीं के सुझाव और आदेश से संविधान के अनुवाद तैयार किये गाए।.... इस प्रकार संविधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते राजेन्द्र बाबू ने संस्कृत, हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की समृद्धि में पर्याप्त सहायता की। साथ ही उन्होंने भारतीय भाषाओं में संविधानिक शब्दावली के प्रयोग का भी सूत्रपात किया।'' सभा के अन्य सदस्यों की भाँति राजेन्द्र बाबू ने भी कई अवसरों पर अपने निजी विचार को रखा, किन्तु सभा का अनुकूल रुख न देखकर वे अपने आग्रह को हठाग्रह में नहीं परिणत होने देते थे। बालकृष्ण जी अपने पूर्वोक्त लेख में बताते हैं कि ''राजेन्द्र बाबू का दृढ़ मत था कि जिस प्रकार की शैक्षणिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ भारत में विद्यमान हैं उनमें वयस्क मताधिकार देश के लिए हितकर सिद्ध न होगा। उन्हें यह दिखाई पड़ता था कि वयस्क मताधिकार राजनीतिक जीवन में जाति-पाति के भूत को लाकर खड़ा कर ही देगा, साथ ही वह उसे पूर्णतः भ्रष्ट भी कर देगा। किन्तु सभा का मत भिन्न था। सभा समझती थी कि जब तक वयस्क मताधिकार न स्थापित होगा तब तक राज्य कुछ वर्गों के हाथ की कठपुतली बना रहेगा। सच्चे प्रजातंत्र की स्थापना के लिए यह बात आवश्यक है कि राज्य के सभी नागरिकों को इस बात का पूरा अवसर प्राप्त रहे कि वे इस बारे में अपनी राय समय-समय पर व्यक्त कर सकें। अतः राजेन्द्र बाबू ने अपनी बात पर किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया। संविधान सभा ने जैसा संविधान बनाना चाहा, बनने दिया। संविधान सभा ने जो विभिन्न समितियाँ नियुक्त की थीं उनके समक्ष वे कभी-कभी अपने विचार व्यक्त करते थे और कभी-कभी सदस्यों से वैयक्तिक तौर पर भी कुछ बातें कहते थे। किन्तु अपनी बात कहने के पश्चात वे किसी प्रकार का आग्रह न करते थे। समितियाँ या सदस्य यदि उनकी बात को अनसुनी कर देते तो वे बुरा न मानते थे।'' यदि उनकी बात को अनसुनी कर देते तो वे बुरा न मानते थे।''

अपनी बात पर किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया। संविधान सभा ने जैसा संविधान बनाना चाहा, बनने दिया। संविधान सभा ने जो विभिन्न समितियाँ नियुक्त की थीं उनके समक्ष वे कभी-कभी अपने विचार व्यक्त करते थे और कभी-कभी सदस्यों से वैयक्तिक तौर पर भी कुछ बातें कहते थे। किन्तु अपनी बात कहने के पश्चात वे किसी प्रकार का आग्रह न करते थे। समितियाँ या सदस्य यदि उनकी बात को अनसुनी कर देते तो वे बुरा न मानते थे।''

संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में निस्संदेह राजेन्द्र बाबू ने सभी सदस्यों के साथ अपने को समायोजित करने में अत्यन्त उदारता का परिचय दिया, फिर भी ऐसा भी अवसर आया जब अपने आत्म सम्मान पर पड़ी चोट से मर्माहत होकर सभा के अध्यक्ष पद से उन्होंने त्याग-पत्र देने का मन बना लिया था। इस संबंध में आचार्य जे. बी. कृपलानी 'राजेन्द्र बाबू-एक संस्मरण' नामक लेख में बताते हैं - ''एक बार संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में उनके साथ ऐसी घटना हुई जिससे उन्हें लगा कि उनके आत्म-सम्मान पर आँच आई है। उन्होंने इस्तीफा देना चाहा। इस्तीफा लिखकर वे उसे दिखाने के लिए गांधी जी के पास ले गये। गांधी जी उनकी बात से सहमत थे और इस्तीफे के मसौदे को सही मानते थे। गांधी जी ने फिर राजेन्द्र बाबू को सलाह दी कि वे इस्तीफा न दें। बोले, तुम्हारी जगह अगर कोई और होता तो मैं उसे न रोकता। पर यह ठीक नहीं है कि तुम जैसा व्यक्ति महज अपने

आत्म-सम्मान के प्रश्न पर इस्तीफा दे। राजेन्द्र बाबू ने गांधी जी की सलाह मान ली और अपने पद पर काम करते रहे।''

संविधान बनाने में अध्यक्ष के रूप में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए राजेन्द्र बाबू ने सभा के अध्यक्ष की हैसियत से और मानवीय दृष्टि से जो एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया वह था सभा के कार्यरत कर्मचारियों की सेवा का स्थायीकरण कराना। बालकृष्ण जी लिखते हैं - ''संविधान सभा के सभी कर्मचारी अस्थायी थे, अत: जब संविधान सभा का कार्य समाप्त हुआ और संविधान-सभा के विसर्जन का समय आया तब यह सवाल जब संविधान सभा का कार्य समाप्त हुआ और संविधान-सभा के विसर्जन का समय आया तब यह सवाल उठा कि इन अस्थायी कर्मचारियों के बारे में क्या कार्यवाही की जाए। कुछ उच्च प्रशासकीय पदाधिकारियों का मत था कि इन्हें सेवा से उसी प्रकार छुट्टी दे दी जाए जिस प्रकार युद्ध-काल में भर्ती किये गए सैनिक और अफसर युद्ध के पश्चात् नौकरी से अलग कर दिये गए थे। किन्तु इस प्रकार की कार्यवाही का तो यह अर्थ होता कि संविधान सभा की अनन्य और अथक सेवा करने का उनको यह पुरस्कार मिलता कि उनकी रोजी ही उनसे छीन ली जाती। राजेन्द्र बाबू जैसे धर्मपरायण और सहृदय व्यक्ति के लिए तो यह कल्पना करना भी असंभव था कि ऐसी क्रूर नीति भी अपनाई जा सकती है। अत: उन्होंने निश्चय किया कि इन कर्मचारियों में से एक भी नौकरी से अलग न किया जाए, वरन् उन्हें भारत सरकार के विभिन्न विभागों और कार्यालयों में रिक्त स्थानों पर रख दिया जाए। इस कार्य को निष्पन्न करा देने की उन्हें इतनी चिन्ता थी कि कई रात्रि तो वे सो भी न सके। वास्तव में जब तक सब कर्मचारियों को उचित पद और स्थान न मिल गाये, तब तक उन्हें मानसिक शांति न मिली।''

वस्तुत: जिस संविधान को बनाने में 9 दिसम्बर, 1946 से 26 नवम्बर, 1949 तक यानी दो वर्ष ग्यारह महीने, सत्रह दिन का समय लगाए इस बीच कुल ग्यारह सत्र हुए, इन ग्यारह सत्रों में 165 दिन कार्य हुए जिनमें 114 दिन प्रारूप संविधान के विचारार्थ लगाए गये। अब इन सब में किस सदस्य की कितनी सहभागिता रही, किसने कौन विषय को अपने विचारों के अनुकूल साधा, सभा के अध्यक्ष तथा प्रारूप समिति के अध्यक्ष के कौन-कौन से विचार संविधान में शामिल किये गाये, उन सब का पूरा ब्यौरा देना यहाँ संभव नहीं है। फिर भी थोड़े में यहाँ जो कुछ लिपिबद्ध किया गाया है, उससे जाहिर है कि संविधान का निर्माता किसी एक व्यक्ति को नहीं कहा जा सकता। यद्यपि प्रो. हुमायूँ कबीर अपने लेख में संविधान की प्रशंसा करते हुए यह स्वीकार करते हैं कि ''इसका प्रमुख श्रेय डॉ. अम्बेडकर के साथ-साथ डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को भी है।'' प्रो. कबीर संविधान निर्माण का जो श्रेय संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर को देते हैं वह इन दोनों शख्सियतों के प्रति उनकी श्रद्धा का ही प्रमाण है जबकि वस्तु सत्य यह है कि इस संविधान को बनाने में सरदार वल्लभभाई पटेल, पंडित जवाहरलाल नेहरू, के. एम. मुंशी जैसे कई दिग्गाज विधिवेताओं, राजनेताओं का योगदान रहा है।

उनकी श्रद्धा का ही प्रमाण है जबकि वस्तु सत्य यह है कि इस संविधान को बनाने में सरदार वल्लभभाई पटेल, पंडित जवाहरलाल नेहरू, के. एम. मुंशी जैसे कई दिग्गाज विधिवेताओं, राजनेताओं का योगदान रहा है।

संविधान-निर्माण की पूरी प्रक्रिया का इतिहास देखने पर साफ-साफ पता चलता है कि भारतीय संविधान जिस रूप में 26 नवम्बर, 1949 को अंगीकृत किया गया, वह अपने जमाने के लगभग तीन सौ महत्त्वपूर्ण विधिवेताओं, राजनेताओं तथा चिंतकों से गठित संविधान सभा के सामूहिक उद्यम का प्रतिफल है, इसलिए उसका निर्माता किसी एक व्यक्ति को हर्गिज नहीं कहा जा सकता चाहे वह प्रारूप समिति के अध्यक्ष हों या संविधान सभा के अध्यक्ष हों। आज के राजनीतिक माहौल में डॉ. अम्बेडकर को 'संविधान का पिता या निर्माता' कहने का फैशन चल पड़ा है, किन्तु इस संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने संविधान सभा में नवम्बर 1949 में समापन भाषण देते हुए जो कहा था, उसे हमें स्मरण कर लेना चाहिए। उनके उस भाषण के कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं -

(1)– ''सभा के सदस्यों और प्रारूप समिति के मेरे सहयोगियों द्वारा मुक्त कंठ से मेरी जो प्रशंसा की गई है, उससे मैं इतना अभिभूत हो गया हूँ कि अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं है। संविधान सभा में आने के पीछे मेरा उद्देश्य अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा करने से अधिक कुछ नहीं था। मुझे दूर तक यह कल्पना नहीं थी कि मुझे अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सौंपा जाएगा। इसलिए उस समय मुझे घोर आश्चर्य हुआ जब सभा ने प्रारूप समिति के लिए चुन लिया। जब प्रारूप समिति ने मुझे उसका अध्यक्ष निर्वाचित किया तो मेरे लिए यह आश्चर्य से भी परे था। प्रारूप समिति में मेरे मित्र सर अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर जैसे मुझसे भी बड़े, श्रेष्ठतर और अधिक कुशल व्यक्ति थे। मुझ पर इतना विश्वास रखने, मुझे अपना माध्यम बनाने एवं देश की सेवा का अवसर देने के लिए मैं संविधान सभा और प्रारूप समिति का अनुगृहीत हूँ।''

मुझसे भी बड़े, श्रेष्ठतर और अधिक कुशल व्यक्ति थे। मुझ पर इतना विश्वास रखने, मुझे अपना माध्यम बनाने एवं देश की सेवा का अवसर देने के लिए मैं संविधान सभा और प्रारूप समिति का अनुगृहीत हूँ।''

(2)– ''जो श्रेय मुझे दिया गया है, वास्तव में उसका हकदार मैं नहीं हूँ। यह श्रेय संविधान सभा के संवैधानिक सलाहकार सर बी. एन. राव को जाता है, जिन्होंने प्रारूप समिति के विचारार्थ संविधान का कच्चा प्रारूप तैयार किया। श्रेय का कुछ भाग प्रारूप समिति के सदस्यों को भी जाना चाहिए जिन्होंने जैसा मैंने कहा, 141 बैठकों में भाग लिया और नये फॉर्मूले बनाने में जिनकी दक्षता तथा विभिन्न दृष्टिकोणों को स्वीकार करके उन्हें समाहित करने के सामर्थ्य के बिना संविधान–निर्माण का कार्य सफलता की सीढ़ियाँ नहीं चढ़ सकता था। श्रेय का एक बड़ा भाग संविधान के मुख्य ड्राष्टमैन श्री एस. एन. मुखर्जी को जाना चाहिए। जटिलतम प्रस्तावों को सरलतम व स्पष्ट कानूनी भाषा में रखने का उनका सामर्थ्य और उनकी कड़ी मेहनत का जोड़ मिलना मुश्किल है। वह सभा के लिए एक संपदा रहे हैं। उनकी सहायता के बिना संविधान को अंतिम रूप देने में सभा को और कई वर्ष लग जाते। मुझे श्री मुखर्जी के अधीन कार्यरत कर्मचारियों का उल्लेख करना भूलना नहीं चाहिए, क्योंकि मैं जानता हूँ कि उन्होंने कितनी मेहनत की है और कितना समय, कभी–कभी तो आधी रात से भी अधिक दिया है। मैं उन सभी के प्रयासों और सहयोग के लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ।''

(3)– ''यदि यह संविधान सभा केवल 'भानुमती का कुनबा' होती, एक बिना सीमेंटवाला कच्चा फुटपाथ, जिसमें एक काला पत्थर यहाँ और एक सफेद पत्थर वहाँ लगा होता और जिसमें प्रत्येक सदस्य या गुट अपनी मनमानी करता तो प्रारूप समिति का कार्य बहुत कठिन हो जाता। तब अव्यवस्था के सिवाय कुछ न होता। अव्यवस्था की संभावना सभा के भीतर कांग्रेस पार्टी की उपस्थिति से शून्य हो गाई, जिसने उसकी कार्यवाहियों में व्यवस्था और अनुशासन पैदा कर दिया। यह काँग्रेस पार्टी के अनुशासन का ही परिणाम था कि प्रारूप समिति प्रत्येक अनुच्छेद और संशोधन की नियति के प्रति आश्वस्त होकर उसे सभा में प्रस्तुत कर सकी। इसलिए सभा में प्रारूप संविधान के सुगमता से पारित हो जाने का सारा श्रेय काँग्रेस को जाता है।''

प्रस्तुत कर सकी। इसलिए सभा में प्रारूप संविधान के सुगमता से पारित हो जाने का सारा श्रेय काँग्रेस को जाता है।''

(4)– ''यदि इस संविधान सभा के सभी सदस्य पार्टी अनुशासन के सामने घुटने टेक देते तो उसकी कार्यवाहियाँ बहुत फीकी होतीं। अपनी संपूर्ण कठोरता में पार्टी अनुशासन सभा को जी हुजूरियों के जमावड़े में बदल देता। सौभाग्यवश उसमें विद्रोही थे। वे थे श्री कामत, डॉ. पी. सी. देशमुख, श्री सिधावा, प्रो. सक्सेना और पं. ठाकुरदास भार्गाव। इसके साथ मुझे प्रो. के. टी0. शाह और पं. हृदयनाथ कुंजरू का भी उल्लेख करना चाहिए। उन्होंने जो बिंदु उठाये, उनमें से अधिकांश विचारात्मक थे। यह बात कि मैं उनके सुझावों को मानने के लिए तैयार नहीं था, उनके सुझावों की महत्ता को कम नहीं करती और न सभा की काररवाइयों को जानदार बनाने में उनके योगादान को कम आँकती है। मैं उनका कृतज्ञ हूँ। उनके बिना मुझे

संविधान के मूल सिद्धांतों की व्याख्या करने का अवसर न मिला होता, जो संविधान को यंत्रवत पारित करा लेने से अधिक महत्त्वपूर्ण था।''

(5)- अंत में संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के संबंध में इसी भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने यह उद्‌गार व्यक्त किया- ''और अंत में, अध्यक्ष महोदय, (President) जिस तरह आपने सभा की कारवाई का संचालन किया हैए उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने जो सौजन्य और समझ सभा के सदस्यों के प्रति दर्शाई है वे उन लोगों द्वारा कभी भुलाई नहीं जा सकती, जिन्होंने इस सभा की कारवाइयों में भाग लिया है। ऐसे अवसर आये थे, जब प्रारूप समिति के संशोधन ऐसे आधारों पर अस्वीकृत किये जाने थे जो विशुद्ध रूप से तकनीकी प्रकृति के थे। मेरे लिए वे क्षण बहुत आकुलता से भरे थे, इसलिए मैं विशेष रूप से आपका आभारी हूँ कि आपने संविधान-निर्माण के कार्य में यांत्रिक विधिवादी रवैया अपनाने की अनुमति नहीं दी।''

डॉ. अम्बेडकर के उपरोक्त उद्‌गारों में जिस उच्चता, व्यापकता, सर्व स्वीकार्यता के धरातल पर भावों की अभिव्यक्ति हुई है वह यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि भारतीय संविधान को बनाने में एक-से-एक बढ़कर कानून विधि-विशेषज्ञों, कानून-विदों का समवेत योगदान रहा है। संविधान बनाने के श्रेय का खुद डॉ. अम्बेडकर ने जिस तरह से बँटवारा किया है, वह श्लाघनीय तो है ही, साथ ही वह किसी एक व्यक्ति को सम्पूर्ण श्रेय का हकदार नहीं बनने देता। इन सारे तथ्यों को ध्यान में रखते हुए

वाजिब यही होगा कि वर्तमान समय में दलित समुदाय का 'वोट हथियाओ' की नीयत से 'संविधान के पिता डॉ. अम्बेडकर' (Father of the Indian Constitution) या 'संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर' या फिर 'जो संविधान हमें डॉ. अम्बेडकर ने दिया' जैसी चलाई जा रही जुमलेबाजी बंद होनी चाहिए (क्योंकि यह न केवल अर्ध सत्य है, बल्कि अप्रजातांत्रिक तथा व्यक्तिवादी मनोवृति का भी पोषक है और डॉ. अम्बेडकर के उपरोक्त सत्य-वचनों का भी प्रत्याख्यान है। संविधान-सभा के अध्यक्ष के रूप में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की कैसी भूमिका रही, उसका महत्त्व डॉ. अम्बेडकर के कथन से ही मालूम हो जाता है। अब इस पर विवाद करना वितंडाबाद को ही प्रश्रय देना होगा।

संदर्भ :

1- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद : एक युगा स्मरण-सं- वाल्मीकि चौधारी, लेखक श्री बालकृष्ण के प्रथम सचिव रहे थे- पृ- 224

2- उप- पृ- 75

3- उप- पृ- 274

4- उप- पृ- 237

5- उप- पृ- 237

6- सरदार पटेल-राजमोहन गाँधी, पृ- 512

7- डॉ- राजेन्द्र प्रसाद-मंगालमूर्ति, पृ- 311

8- वही

9- सरदार पटेल- राजमोहन गाँधी, पृ- 513

10- वही

11- उप- पृ- 514-15

12- डॉ- राजेन्द्र प्रसाद - मंगलमूर्ति, पृ- 314

13- वही

14- उप- पृ- 314-15

15- डॉ- राजेन्द्र प्रसाद : एक युगा स्मरण - सं- वाल्मीकि चौधरी, पृ- 240

16- उप- पृ- 242

17- उप- पृ- 244

18- वही

19- उप- पृ- 240

20- उप- पृ- 79

21- उप- पृ- 245

22- उप- पृ- 109

23- भारत के महान भाषण, सं- रुद्रांशु मुखर्जी, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2012- पृ- 199-200- अम्बुज टावर, तिलकामाँझी भागालपुर -812001

संपर्कः मो. 9801055395

विश्व शांति के लिए गांधी ही विकल्प

प्रो. कन्हैया त्रिपाठी

जो कर्म आसक्ति के बिना हो ही न सकें वे सब त्याज्य है – छोड़ देने लायक हैं। यह सुवर्ण नियम मनुष्य को अनेक धर्म-सकटों से बचाता है।[1]

–महात्मा गांधी

गांधी जी के संदर्भ में अलबर्ट आइंस्टीन का वह कथन अब प्राय: लोग स्मरण करते हैं जो उन्होंने 20वीं शताब्दी के मध्य में कही थी कि- दुनिया एक दिन आश्चर्य करेगी कि गांधी जैसा कोई हाड़ मांस का पुतला इस धरती पर कभी चला होगा। जीवन कृपा पर नहीं जी सकते हम। हिंसक होता समाज, साम्राज्यवादी व्यवस्थाएं और क्रूरता के साथ जीने वाला धड़ा यह बार-बार सन्देश दे रहा है कि यह सभ्यता हमारी कृपा पर सुरक्षित है। हम खुद विचार करें कि यदि हमारे दैनंदिन के जीवन में युद्ध की दहशत हो, तो हम कैसा महसूस करेंगे? जलवायु परिवर्तन का संकट गहराता जा रहा है। जब यह पता चले कि प्रकृति का कहर हमारे जीवन पर टूटने वाला है, तो हम कैसा महसूस करेंगे? यह चिंताजनक स्थितियां संसार भर में बनी हुई हैं। रूस और यूक्रेन के अलावा दुनिया के बहुत से देशों में शांति नहीं है। बड़े पैमाने पर हिंसक लोग और हिंसक उत्पाद हमारी चिंताओं को बढ़ा दिए हैं। सम्पूर्ण मनुष्यता के ध्वजवाहक यह महसूस करने लगे हैं कि शायद हम पहले से कहीं ज्यादा हिंसक, लालची और क्रूर हो गए हैं। हम बहुत कुछ खोने जा रहे हैं और हमें इसके लिए कुछ अलग से सोचना आवश्यक है।

महात्मा गांधी एक ऐसे महान प्रदीप्ति संसार भर में हैं जो हिंसा के विरुद्ध अहिंसा का जयघोष करते हैं। शांति के स्रोत हैं। गांधी जी ने हिंसा की बारीकियों को बहुत सूक्ष्मता से प्रकट करते हुए बहुत पहले कहा था कि 'अहिंसा कोई स्थूल वस्तु नहीं है, जो आज हमारी दृष्टि के सामने है। किसी को न मारना तो है ही, कुविचार मात्र हिंसा है। उतावली हिंसा है। द्वेष हिंसा है। किसी का बुरा चाहना हिंसा है। जगत के लिए जो आवश्यक वस्तु है, उस पर कब्जा रखना हिंसा है।' आज संसार में हिंसा कब्जे की संस्कृति से फल-फूल रही है। आधिपत्य, अतिक्रमण और साम्राज्य के विस्तार में वशीभूत हमारी सोच ने हमें ही बहुत पंगु बना दिया है। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह राह विनाश की ओर जाती

गांधी जी के संदर्भ में अलबर्ट आइंस्टीन का वह कथन अब प्राय: लोग स्मरण करते हैं जो उन्होंने 20वीं शताब्दी के मध्य में कही थी कि- दुनिया एक दिन आश्चर्य करेगी कि गांधी जैसा कोई हाड़ मांस का पुतला इस धरती पर कभी चला होगा। जीवन कृपा पर नहीं जी सकते हम। हिंसक होता समाज, साम्राज्यवादी व्यवस्थाएं और क्रूरता के साथ जीने वाला धड़ा यह बार-बार सन्देश दे रहा है कि यह सभ्यता हमारी कृपा पर सुरक्षित है।

है। 'गांधीजी साधन-साध्य मीमांसा' आलेख में रेबरेन्ड पो. टी. चाण्डी ने लिखा है, 'गांधीजी ने सबसे बड़ी बात, जो बड़े साहस के साथ कहो, वह है साधन-साध्य की मीमांसा। उनका कहना था कि अगर हमारा लक्ष्य पवित्र है, तो उसको प्राप्त करने के जो साधन हैं, उन्हें भी अवश्य पवित्र होना चाहिये। क्योंकि साधन ही लक्ष्य के रूप में बदल जाते हैं। हिंसा से हिंसा दूर नहीं हो सकती, कीचड़ से कीचड़ नहीं धोया जा सकता, घृणा से घृणा नहीं मिटाई जा सकती। साम्यवादी लोग कहते हैं, लक्ष्य पवित्र होना चाहिये, साधन चाहे जैसा भी हो और बहुत से लोग भी ऐसा कहते और मानते हैं। इसका फल संसार भोग रहा है।[2] जब भारत आजाद नहीं था तो गांधी जी ने अहिंसक आन्दोलन भारत में चलाया था और उन्होंने प्रतिरोध की संस्कृति को सत्याग्रह के मार्ग पर ले जाकर यह सन्देश दिया था कि हमारे प्रतिरोध का स्वर कैसा होना चाहिए।

गांधीजी ने साधन और साध्य की अहमियत को बताया था। उन्होंने प्रेम के नियम पर आधारित सत्याग्रह किया था। उन्होंने नमक सत्याग्रह में अहिंसा के सांकेतिक आन्दोलन को भी ऐतिहासिक बना दिया। गांधी का विश्वास यह था कि हमें कोई भी शक्ति अहिंसक पथ पर चलने से न रोक सकती है और न ही पराजित कर सकती है। दुनिया के इतिहास में सांकेतिक अहिंसक सत्याग्रह में गांधीजी ने नमक तोड़ो, उपवास, जेल-यात्रा और आमरण अनशन, स्वदेशी को अपना हथियार बनाया। इसका असर एटली के मस्तिष्क तक पहुंचा था और भारत की समस्त जनता पर हुआ, इससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता। गांधी ऐसे ही अजेय अहिंसक योद्धा नहीं कहे जाते।

आज जब पूरी दुनिया में परमाणु के खतरे दस्तक दे रहे हैं, गरीबी और पर्यावरण के मुद्दे सताने लगे हैं तो गांधी के अहिंसा की डोर युद्ध और संघर्ष या जलवायु संकट से प्रभावित और अप्रभावित राष्ट्राध्यक्षों को अच्छी लगने लगी है। सबकी उम्मीदें गांधी के अहिंसा में आ बसी हैं। इतना ही नहीं मानवाधिकारों के हनन जहाँ हो रहे हैं वहां भी गांधी के बताये रस्ते को लोग अपने लिए वरदान मानने लगे हैं। मार्टिन लूथर किंग द्वितीय, यासर अराफात, किम दे जिंग, दलाई लामा, संयुक्त राष्ट्र के पूर्व व वर्तमान महासचिवों के वक्तव्यों को उठाकर देख लिया जाए तो सबने कहीं न कहीं गांधी के अहिंसक मार्ग से पूरी पृथ्वी पर शांति की संभवनाओं के लिए अपने-अपने विचार व्यक्त किये हैं। इस पर से यह विचार आना स्वाभाविक है कि बंदे में था दम। भारत में और हांगकांग में जो आन्दोलन चल रहे हैं वह इसके बड़े उदाहरण हैं।

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 77वें अधिवेशन के समापन समारोह में महासभा के निवर्तमान अध्यक्ष महामहिम चबा कोरोसी ने एक महत्वपूर्ण बात कही थी कि हमारे वैश्विक सहयोग की बुनियादी शर्तें बदल गई हैं। हम अब एक अलग दुनिया में रहते हैं। यह सच है कि बदलाव बहुत बड़े पैमाने पर हो रहा है और हम बदले भी हैं। उसकी गति को समझने कि आवश्यकता है और उसे रेखांकित करना ही होगा।[3] यदि दुनिया के लोग अहिंसक मार्ग पर चलकर इस बदलाव को करते हैं तो यह वरदान सिद्ध हो सकता है। किन्तु परमाणु और हथियारों के ढेर से बदलाव करेंगे तो मनुष्यता नहीं बचेगी, यह भी एक सचाई है।

विश्व भर में विगत दो दशक से अधिक की अवधि का दौर देखें तो बड़े पैमाने पर शरणार्थियों की संख्या में बाढ़ सी आई है। अनेकों देशों में संघर्ष, युद्ध और अप्रत्याशित हिंसा से जीवन की अनिश्चितता बढ़ी है। इस कारण भी लोग यह सोच रहे हैं कि स्थायी शांति हेतु विकल्प खोजना आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन से लेकर समुद्र में हलचल को भी रेखांकित किया जा रहा है। ऐसे में इस बदलती सभ्यता-संकट हेतु विमर्श पूरी दुनिया में जारी है। गांधी ने बहुत पहले यह कहा था कि हमें संयमित और अनुशासित जीवन की कसौटी पर रखकर आगे बढ़ना होगा। उन्होंने प्रेम के नियम पर आधारित अहिंसक जिंदगी जीने की अपील की थी। यह अपील उस समय चाहे जो भी रही हो, लेकिन जब आज जीवन-सततता, पृथ्वी बचाने और सतत विकास की बातें हो रही हैं, तो गांधी की दी हुई शिक्षाएं पूरी दुनिया को याद आने लगी हैं। इसलिए भी संसार भर के लोग गांधी की ओर बहुत उम्मीद से देख रहे हैं और वे तलाश रहे हैं एक तनावमुक्त समाज, शांतिप्रिय समाज और सत्यनिष्ठ समाज।

आधिपत्य और लालच से साम्राज्य बढ़ाने की चाहत पूरी हो जाती है लेकिन शांति के लिए तो अहिंसा आवश्यक होती है। गांधी को इसलिए भी देश अपने सभ्यता का विकल्प मान रहे हैं क्योंकि उनकी बुनियाद कितनी खोखली हैं उसे भी वह अच्छी तरह जानते हैं। नरेंद्र मोदी ने जब अखिल भारतीय स्वच्छता अभियान के रूप में भारत में गांधी के स्वच्छता मिशन को आगे बढ़ाया तो गांधी की उपस्थिति और उनकी मौलिकता तथा दूरदृष्टि ज्यादा मजबूती से लोगों के हृदय का हिस्सा बनी है। इससे भारत में एक स्वच्छता क्रांति की लहर आई और पड़ोसी देशों में भी स्वच्छता को लेकर जो जागरूकता बढ़ी है उसका असर आने वाले कुछ वर्षों में दिखने लगेगा। सभी महसूस कर रहे हैं कि स्वच्छता और सादगी से एक स्वस्थ समाज का निर्माण किया जा सकता है।

इस बीच बाजार और उपभोक्तावादी संस्कृति ने एक अलग प्रकार से हिंसा को जन्म दिया है. कॉर्पोरेट ने जिन तबके के मन में भय पैदा किया है। जो लोग अपनी संस्कृति और सभ्यता के साथ अपने परिक्षेत्र में अतिक्रमण नहीं चाहते वे भयभीत होंगे ही। दुनिया के तमाम हरित-क्षेत्र पर कॉर्पोरेट की नजर है जिसे वे हथियाना शुरू कर दिए हैं। गांधी जी का एक सन्देश होता था कि जो किसी का संपत्ति छीनता है अहिंसा के नियम से च्युत हो जाता है। इस सन्देश को बहुत हलके में लेने वाले और लालच के शिकार कॉर्पोरेट जगत के लोग यदि ऐसा कर रहे हैं तो वह उस समाज का अनहित नहीं कर रहे हैं बल्कि वह खुद का अनहित कर रहे हैं। कॉर्पोरेट जगत की हरित क्षेत्र में आधिपत्य की होड़ कम हो जाएगी क्योंकि ईश्वर के नियम और इसके प्रेरणा-स्रोत नि:संदेह गांधी हैं। उनकी अहिंसा की ताकत ऐसा करने से रोकेगी।

अब यह देखा जा रहा है कि गांधी जयंती व उनकी पूण्यतिथि पर लोग केवल गांधी जयंती नहीं मना रहे हैं बल्कि बहुत से बड़े साम्राज्यशाली देश के लोग अहिंसा दिवस पर संकल्प ले रहे हैं कि हमें स्थायी शांति की ओर लौटने के लिए अहिंसक सभ्यता के विकास में शामिल होना ही होगा। कहते हैं जब परिस्थितियां परिवर्तन की ओर होती हैं, तो लोग एक सशक्त मध्यम खोजते हैं, जहाँ से वे सुरक्षित रहें। आज व्यापक पैमाने पर जो हवा का रुख बदला है, तो असीम शांति की खोज हेतु सम्पूर्ण दुनिया एकत्रित हो रही है। और इसी में दुनिया की भलाई भी छिपी हुई है, यह एक बड़ा सच है। फिर अपनी भलाई किसे प्यारी नहीं है? शायद सबकी खुशी के लिए गांधी सबकी जरूरत हैं।

कुविचार गांधी के महनीय कार्यों को अपमानित करता है और उनके प्रति जो बहुत असाधारण निष्ठा रखते थे, उनके लिए एक बार सोचनीय स्थिति पैदा कर दिया है। इस बीच सर्वोदयवादियों के अंदर जो निराशा जन्म ली है उससे उनका हृदय दुखी हुआ है। गांधी की विरासत और गांधी से जुड़ी सभ्यताओं के संरक्षण की कोशिश आज आवश्यक है। हमारे राष्ट्र को अपना दुर्भाग्य लिखने की जगह सौभाग्य गढ़ने पर विचार करना चाहिए। गांधी और गांधी से जुड़ी विरासत में विद्यमान चीजों को बचाना भी आज आवश्यक हो गया है। गांधी जी की विरासत, उनकीं वैचारिकी से भारत के प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी ने विश्व में स्वच्छता आन्दोलन छेड़ा है और इस आन्दोलन को नए आयाम भी मिले हैं।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गांधी के स्वच्छता संदेश को पुन: जनता के बीच ले जाने की कोशिश मन की बात के माध्यम से की है। प्रधान मंत्री ने तो सदैव महात्मा के विचारों को वैश्विक स्तर पर फैलाने की भरपूर कोशिश की है। वह गांधी मूल्यों, विचारों और संस्थाओं को सुरक्षित रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि गांधी जी के वैचारिकी को आगे बढ़ाने वाली संस्थाओं को सुरक्षित करके उनके विचारों से देश को आगे ले जाने की कोशिश की जाए। इसके लिए समन्वय की रणनीति अपनाकर यदि गांधी जी के विचारों व संस्कारों से बहती रसधार को आगे ले जाया जाए, यह आवश्यक है। सभ्यता विमर्श में गांधी के लिए हम सभी केवल आज शोर न करें। आज हमें वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भी तो शामिल होना है। गांधी एक ऐसे व्यक्तित्व हैं जो हमें सभी प्रतिस्पर्धा में सबसे आगे खड़ा रखेंगे। उनके पास सत्य और अहिंसा का तत्व है।

महासचिव एंतोनियो गुटेरेश ने एक बार कहा था ''महात्मा गांधी ने एक बार कहा था, 'अहिंसा इंसानों के पास एक महानतम शक्ति के रूप में मौजूद है।' संयुक्त राष्ट्र का चार्टर भी उस भावना को प्रतिबिंबित करता है। यह आज सोचने वाली बात है कि महात्मा भारत में थे लेकिन वे संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में प्रतिबिंबित होते हैं।[4] अब इस बात को लेकर यदि वे सम्पूर्ण विश्व में हमारे लिए कुतूहल का विषय बने हुए हैं और उन्हें करिश्माई व्यक्तित्व के रूप में देखा जा रहा है तो यह उनके जीवन की अपनी जीवन पद्धति से निकली हुई एक ऊर्जा है जिससे लोग प्रभाषित हो रहे हैं। डेनिस फ्रांसिस संयुक्त राष्ट्र महासभा के अध्यक्ष हैं। उनका कथन है कि हम पूर्ववृत्तों की स्याही से लिखी गई कहानियों से ज्ञान प्राप्त करें। जैसे ही हम पिछले वर्ष का जायजा लेते हैं, मुझे स्वर्गीय महात्मा गांधी के शब्द याद आते हैं, कि: 'शांति का कोई रास्ता नहीं है, शांति ही रास्ता है'। शायद हमें इसे दोबारा पढ़ना चाहिए, 'शांति का कोई रास्ता नहीं है, शांति ही रास्ता है'। दरअसल, शांति हमेशा हमारे सामूहिक प्रयासों का आधार और अंतिम लक्ष्य होना चाहिए- और यह 2024 में हमारी सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिकता होनी चाहिए। यह, निश्चित रूप से, वह आधारशिला है जिस पर हम जो कुछ भी करते हैं वह निर्भर करेगा। हम आपके निरंतर रचनात्मक जुड़ाव की आशा करते हैं।[5]

इस विश्वास के पीछे उनकी अपनी कोई मजबूरी नहीं है, अपितु गांधी से ही शांति की उम्मीद की जा रही है. उन्हें विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। भारत और विश्व में विकल्प का नाम बनते गांधी के सांस्कृतिक व साभ्यतिक अवदान से चाहे जितना लाभ हुआ हो या होने की संभवना हो, लेकिन यदि उनकी कही गयी बातें कहानी के रूप में, गाथा के रूप में वैश्विक पटल पर उद्धृत की जा रही हैं तो इसके बहुत बड़े मायने हैं। भारत में गांधी के नाम पर कार्य करने वाले संस्थानों, सेवाभावी लोगों, विचारकों, अकादमिक जगत के लोगों, वैयकल्पिक सभ्यता के हितधारकों का अब यह दायित्व है कि वे गांधी के महनीय काम को अपने आचरण में शामिल करें। एक कविता स्मरण आती है-

नंगे भारत के लिए बने नंगे फकीर,
भूखे भारत के लिए सुखा डाला शरीर,
पीड़ित भारत की सही हृदय में मर्म पीर,
घायल भारत के,
घाव भी लिए,
सीने पर।
जो गोली खाकर गिरी, मरी, वह थी छाया,
है अजर-अमर उसके आदर्शों की काया,
भारत ने जिनको युग-युग तपकर उपजाया,
थे हाड़ मांस
के व्यक्ति नहीं
बाबा गांधी।[6]

जिन कवियों ने गांधी को समझा, उन्होंने जैसे का तैसे सृजन में उतारा। हमारी सभ्यता के विकल्प के रूप में आज महसूस किए जा रहे गांधी युगों तक स्मरण में बने रहेंगे।

सन्दर्भ:

1. प्रस्तावना, महात्मा गांधी, अनासक्तियोग, गुजराती से हिंदी सोमेश्वर पुरोहित, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1967, पृष्ठ-24

2. रेबरेन्ड पो. टी. चाण्डी, गांधीजी साधन-साध्य मीमांसा, गांधी: जीवन के संदर्भ में, सम्पादक-मण्डल, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, बीचोर्थ केशव चन्द्र मिश्र, गांधी शताब्दी जयन्ती व्याख्यान माला, त्रैवार्षिक अक्टूबर 1668 से अक्टूबर 1670 मदनमोहन मालवीय शिक्षण संस्थान भाटपार रानी, देवरिया उ.प्र, 980, पृष्ठ 6

3. https://www-un-org/pga/77/2022/09/26/pga&remarks&at&closing&of&unga&general&debate/
4. https://news-un-org/hi/story/2018/10/1009242
5. https://www-un-org/pga/78/2024/01/16/pga&remarks&at&the&briefing&on&the&priorities&for&the&resumed&part&of&the&78th&session&of&the&un&general&assembly/
6. खादी के फूल, सुमित्रानंदन पंत, बच्चन, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1948, पृष्ठ 65-66

(लेखक पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा में चेयर प्राफेसर हैं।)

संपर्क: मो. 9818759758

विरासत और सतत् विकास का सूत : खादी

डॉ शुभंकर मिश्र

स्कूली दिनों में हिंदी के पाठ्यक्रम में एक पाठ था – 'हिंद महासागर में छोटा सा हिन्दुस्तान'। डॉ रामधारी सिंह दिनकर द्वारा रचित यह दरअसल एक यात्रा वृतांत था, जिसमें मॉरीशस के सौंदर्य और वहाँ फैली भारतीय संस्कृति का मनोरम वर्णन था। उल्लेखनीय है कि मॉरीशस के अधिकतर लोग भारतीय मूल के लोग हैं, जिनमें अधिकतर बिहार और उत्तर प्रदेश से शर्तबन्दी के तहत मॉरीशस आए थे। इनकी भाषा भोजपुरी थी, जिसमें फ्रेंच, क्रेओल भाषाएं भी शामिल थीं। मॉरीशस में हिन्दू संस्कृति की रक्षा का काम तुलसीकृत रामचरितमानस ने किया / यहाँ के गिरमिटिया भारतीय मजदूर अत्याचार सहकर भी अपने धर्म पर डटे रहे और इस द्वीप को दिनकर जी के शब्दों में एक 'छोटा हिन्दुस्तान' बना दिया।

इसके अलावा अंग्रेजी उपनिवेशवाद के खिलाफ लगभग एक जैसी लड़ाई ने मॉरीशस और भारत को एक दूसरे के और नजदीक ला दिया। इस अटूट बंधन को भारत के 'आजादी का अमृत महोत्सव' और मॉरीशस की 'आजादी के 55वें वर्ष' के उनके संयुक्त समारोहों के माध्यम से बेहद खूबसूरती से प्रदर्शित किया गया, जिसका कि मैं बीते दिनों प्रत्यक्षदर्शी रहा । मॉरीशस में समान उत्साह के साथ मनाए जाने वाले ये दोनों उत्सव, आपसी दृढ़ संबंधों की एक मिसाल हैं। यकीनन दोनों गणराज्य एक-दूसरे के प्रति सम्मान भाव रखते हैं और परस्पर प्रगति में एक दूसरे के सहयोगी और सहभागी रहे हैं ।

इतिहास में छोटे-छोटे क्षण भी कैसे महत्वपूर्ण और स्थाई प्रभाव डाल सकते हैं, यह जानना यहाँ दिलचस्प हो सकता है। सन 1901 में दक्षिण अफ्रीका से भारत आते समय गांधीजी मॉरीशस के पोर्ट लुई में रुके थे। उन्हें वहां लगभग दो सप्ताह तक रुकना पड़ा, क्योंकि वे जिस जहाज से यात्रा कर रहे थे, उसमें तकनीकी खराबी आ गई थी और उसे मॉरीशस में लंगर डालना पड़ा था। इस दौरान भारत-मॉरीशस समुदाय ने गांधी जी का गर्मजोशी से स्वागत किया। उनके इस आकस्मिक पड़ाव का मॉरीशस में भारतीय प्रवासियों पर गहरा और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ा।

गांधी जी की मॉरीशस यात्रा एक ऐतिहासिक घटना थी, जिसने उन्हें भारतीय गिरमिटिया मजदूरों से जुड़ने का एक अवसर दिया । उस समय यह पूरा द्वीप, गंभीर प्लेग जैसी महामारी का सामना कर रहा था। गांधी जी ने

इतिहास में छोटे-छोटे क्षण भी कैसे महत्वपूर्ण और स्थाई प्रभाव डाल सकते हैं, यह जानना यहाँ दिलचस्प हो सकता है। सन 1901 में दक्षिण अफ्रीका से भारत आते समय गांधीजी मॉरीशस के पोर्ट लुई में रुके थे। उन्हें वहां लगभग दो सप्ताह तक रुकना पड़ा, क्योंकि वे जिस जहाज से यात्रा कर रहे थे, उसमें तकनीकी खराबी आ गई थी और उसे मॉरीशस में लंगर डालना पड़ा था।

मॉरीशसवासियों से अपने बच्चों को शिक्षित करने और राजनीति में भाग लेने का आग्रह किया। उनका मानना था कि इससे उन्हें अपने अधिकार प्राप्त करने और देश में एक सार्थक जीवन जीने में मदद मिलेगी। मॉरीशस में अपने प्रवास के दौरान, गांधी ने भारत-मॉरीशसवासियों से सामाजिक न्याय, अहिंसा और आत्मनिर्भरता के बारे में बातें कीं। लोगों पर इसका एक दूरगामी प्रभाव पड़ा। अहिंसा, सत्य और सविनय अवज्ञा के उनके संदेश ने न्याय, मानवाधिकार और बेहतर समाज-निर्माण के लिए प्रयास करने वाले अनगिनत व्यक्तियों और आंदोलनों को प्रभावित किया है। गांधी की मॉरीशस यात्रा से इस सरोकार को बल मिला कि हम सभी को दुनिया को एक बेहतर जगह बनाने में अपना यथासंभव योगदान देना चाहिए। मॉरीशस और पूरे विश्व में गांधी का विशेष प्रभाव है।

विदित ही है कि स्वराज (स्व-शासन) के लिए भारत के संघर्ष के दौरान, देशभक्ति के प्रतीक के रूप में 'वंदे मातरम' (भारत माता की जय) का घोष और खादी को बड़े पैमाने पर अपनाया गया था, ताकि पूरे देश को उसके सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ा जा सके और आत्मनिर्भरता के मूल मंत्र को बढ़ावा मिल सके। खादी वस्त्र के उत्पादन के लिए चरखा कातना तब, देश की विरासत से जुड़ने और आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित करने का एक अंतिम तरीका बन गया था। खादी सादा जीवन और उच्च विचार का प्रतीक बन गया और ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ राष्ट्रीय गौरव और प्रतिरोध के एक शक्तिशाली प्रतीक के रूप में उभर कर सामने आया। किसानों, श्रमिकों और बुद्धि जीवियों सहित विभिन्न सामाजिक वर्गों के लोग गर्व से खादी पहनने लगे, जिसने भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

खादी का उल्लेख आते ही गांधी का शांत और मुस्कुराता हुआ चेहरा और उनके द्वारा समर्थित सत्य और अहिंसा, जैसे अजेय औजार का स्मरण हठात हो उठता है। अपनी राष्ट्रीयता-बोध के अतीत पर यदि एक नजर डालें तो यह स्पष्ट ही है कि खादी 'स्वतंत्रता का प्रतीक वस्त्र' बन गया था। स्वतंत्रता के हमारे संघर्ष में इसका एक विशेष सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व है। यह किसी आश्चर्य से कुछ कम नहीं है कि कैसे एक साधारण-सा कपड़ा, हमारे दृढ़ संकल्प को मूर्त रूप दे सकता है और पूरे जनमानस की प्रतिबद्धता और उनके समर्पण भाव की एक आदर्श मिसाल बन सकता है। यह देश के उत्थान के लिए उस समय बेहद आवश्यक था ।

खादी शुरु में 'खद्दर' के नाम से जाना जाता था और औपनिवेशिक शासन से आजादी के संघर्ष के दौरान भारतीयों को आत्मनिर्भर और स्वतंत्र बनने के एक सशक्त प्रतीक के रूप में इसे महात्मा गांधी द्वारा अपनाया गया । यह कपड़ा सूती, रेशम या ऊनी रेशों को चरखे पर हाथ से कताई और हाथ से बुनकर बनाया जाता है। अपनी साधारण शुरुआत के बावजूद, खादी को विभिन्न फैशन क्षेत्रों में व्यापक रूप से स्वीकार किया गया, और आज भी, कई लोग इसकी अनूठी बनावट और स्थायित्व के लिए इसे बेहद पसंद करते हैं। हाथ से बुने हुए कपड़े का पहला टुकड़ा, सन 1917-18 के दौरान साबरमती आश्रम में तैयार किया गया था और इसके खुरदुरेपन के स्वभाव ने गांधीजी को इसका नाम खादी रखने के लिए प्रेरित किया।

20वीं सदी की शुरुआत में, महात्मा गांधी ने भारत के आर्थिक और सामाजिक परिदृश्य को बदलने के लिए हाथ से काते और बुने हुए कपड़े के रूप में खादी की अपार क्षमता को पहचाना। गांधी जी का मानना था कि खादी भारतीयों के बीच आर्थिक सशक्तीकरण, आत्मनिर्भरता और एकता के लिए एक शक्तिशाली माध्यम हो सकता है। खादी को बढ़ावा देकर, उनका उद्देश्य ग्रामीण कारीगरों के लिए आजीविका का साधन प्रदान करना, विदेशी वस्तुओं पर भारत की निर्भरता को कम करना और विशेषकर आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना था।

गांधी जी का 'सर्वोदय' (सभी के लिए कल्याण) का दर्शन खादी के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है, जो समाज के हाशिए पर मौजूद वर्गों के उत्थान पर जोर देता है। धीरे-धीरे खादी भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का प्रतीक बन गया। गांधी जी ने एक बार कहा था कि ''जब तक खादी मुद्रा के समान सार्वभौमिक नहीं हो जाता, तब तक हम स्वराज का अर्थ समझने का दावा नहीं कर सकते।''

(नवजीवन, 12-3-1922)। आज, खादी इस गांधीवादी विचारों के एक अहम हिस्से के रूप में है और भारत की सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण अवयव है।

'खादी आंदोलन' भारत के इतिहास में युगांतकारी महत्व का सिद्ध हुआ, क्योंकि इसका मूल्य कपड़े के महज एक टुकड़े से कहीं अधिक था। यह जीवन के एक ऐसे तरीके का प्रतिनिधित्व करता है, जो हाथ के श्रम की गरिमा की बात करता है। यह आंदोलन तत्कालीन समय में विविध सामाजिक पृष्ठभूमि के लोगों को एकजुट कर रहा था। खादी आंदोलन ने पूरे भारत में गरीब समुदायों के उत्थान में मदद की, साथ ही बड़े पैमाने पर उत्पादन के माध्यम से शोषण के खिलाफ कदम उठाया। खादी को अपनाने से मानवीय श्रम की गरिमा, आत्मनिर्भरता और स्वराज की भावना को एक सच्चे अर्थों में बल मिला।

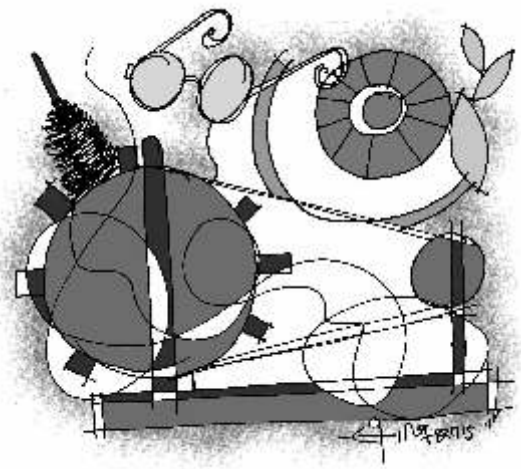

19वीं सदी के उत्तरार्ध में औद्योगीकरण युग के दौरान सामाजिक-राजनीतिक अशांति के कारण भारतीय वस्त्र, हथकरघा और शिल्प कौशल के महत्व ने एक नया मोड़ लिया। भारतीय बाजारों में ब्रिटिश घुसपैठ से भारतीय नेतृत्व और नागरिकों के प्रतिरोध को जगाया। स्वदेशी आंदोलन, अपनी राष्ट्रीय पहचान पुनः प्राप्त करने और आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का माध्यम बना। घरेलू शासन या स्वराज के गांधीवादी विचार में लंबे समय से विदेशी सामग्रियों पर निर्भरता को समाप्त करना शामिल था। इस दिशा में गांधी जी ने भारतीयों को ''कताई, बुनाई और अपनी खादी पहनने'' के लिए प्रेरित किया।

खादी की कहानी वास्तव में प्रेरणास्पद है, और जिन लोगों ने इस परंपरा को जीवित रखने के लिए कड़ी मेहनत की है, उनके प्रति प्रशंसा की भावना सहज जाग उठती है। वैदिक काल से लेकर मुगल काल तक, खादी भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है। समय के साथ इसका विकास कैसे हुआ, यह जानना वाकई दिलचस्प हो सकता है। हालाँकि, यह जानकर दुख होता है कि औद्योगिक क्रांति के दौरान 'पावरलूम' ने, चरखों की जगह कैसे ले ली और खादी बुनाई की कला मुख्य रूप से गांवों तक ही सीमित कैसे रह गई ? लेकिन स्वदेशी आंदोलन के कारण, खादी एक पुनरुद्धार के दौर से गुजरा। गांधी जी के प्रयासों से यह राष्ट्रीय स्वतंत्रता और गरीबों के रोजगार के लिए एक शक्तिशाली हथियार बन गया। महात्मा गांधी ने खादी की कताई को एक 'राष्ट्रीय मिशन' के रूप में लोकप्रिय बनाया और इसे भारत की राष्ट्रीयता के अभिन्न अंग के रूप में देखा। परिणामस्वरूप, स्वतंत्रता संग्राम में विश्वास रखने वाले भारतीयों ने विदेशी निर्मित कपड़ों का बहिष्कार किया और घर में बनी खादी से बने वस्त्र पहने, जिससे इस उद्योग का विस्तार करने में मदद मिली, जो दरअसल पतनोन्मुख था। यह हैरत की बात है कि खादी अभी भी भारतीय गांवों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही पारंपरिक तकनीकों का उपयोग करके हाथ से काते जाते हैं, जिसमें कपास को चरखे पर काता जाता है। यह इसे पर्यावरण के अनुकूल और एक टिकाऊ विकल्प बनाता है। यह कपड़ा गर्मियों और सर्दियों दोनों में पहनने के लिए बिल्कुल उपयुक्त है। यह रेशम या ऊनी धागों से भी निर्मित होते हैं। खादी कपड़ा चुनकर, हम न केवल स्थानीय समुदायों के विकास का समर्थन करते हैं बल्कि एक हरित और अधिक टिकाऊ भविष्य-निर्माण की दिशा में भी अपना योगदान देते हैं।

खादी अपने अद्वितीय सांस्कृतिक महत्व और भारतीय अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय योगदान के लिए वैश्विक मान्यता वाला एक असाधारण कपड़ा है। एक प्राकृतिक फाइबर के रूप में, यह न्यूनतम 'पारिस्थितिक पदचिह्नों' का दावा करता है, जो इसे पर्यावरण के प्रति

जागरूक उपभोक्ताओं के लिए सही विकल्प बनाता है। इसके अलावा, फैशन उद्योग भी खादी की क्षमता और उपादेयता को देख आकृष्ट हुआ है और विविध वर्गों के उपभोक्ताओं के लिए विशुद्ध और मिश्रित इन दोनों प्रकार के उत्पादों को प्रस्तुत कर रहा है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भारत के अहिंसक प्रतिरोध के प्रतीक से लेकर कालातीत फैशन स्टेटमेंट बनने तक खादी की यात्रा इसकी स्थाई प्रासंगिकता का प्रमाण है। दुनिया भर के डिजाइनर, कलाकार और उपभोक्तागण एक विकासशील भविष्य के लिए इस असाधारण कपड़े को अपनाने हेतु प्रेरित हो रहे हैं ।

खादी कपड़े की कहानी दरअसल सतत-विकास और एक तरह के लचीलेपन की है। खादी ने 1950 के दशक के अंत तक 'अंबर चरखों' से लेकर सौर ऊर्जा से चलने वाले यंत्रीकृत चरखों तक को समय के अनुरूप ढाल लिया है। हालाँकि, आनुवंशिक रूप से संशोधित बीटी कपास का अंधाधुंध उपयोग स्वदेशी खादी के लिए एक गंभीर खतरा है। 90 के दशक में युवाओं के 'मिजाज' से जुड़ नहीं पाने के कारण अपनी बिक्री और लोकप्रियता में गिरावट के बावजूद, खादी ने 'मेक इन इंडिया' पहल के माध्यम से अपनी मजबूत वापसी की है। लगभग एक सदी बाद, खादी के संदर्भ में ''स्वतंत्रता के ताने-बाने'' का सिद्धांत आज भी उतना ही प्रासंगिक हैं।

यह जानना रोचक है कि खादी भारत से बाहर पड़ोसी मुल्कों- पाकिस्तान और बांग्लादेश में में भी ठीक उसी प्रकार ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व वाला एक विशिष्ट कपड़ा माना जाता है। खादी एक ऐसा कपड़ा है, जो लगभग 12वीं शताब्दी से बतौर विरासत पाकिस्तान-बांग्लादेश के समृद्ध इतिहास का एक अभिन्न अंग रहा है। मार्को पोलो ने एक बार बंगाल क्षेत्र की खादी को 'मकड़ी के जाले' से भी बेहतर बता कर इसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी। हालाँकि समय के साथ हाथ से बुने हुए कपड़े का महत्व काफी हद तक अब कम हो गया है, फिर भी यह बांग्लादेश में लोगों के दिलों में एक विशेष स्थान रखता है। यह उल्लेख करना उचित है कि बंगाल के खादी मलमल के कपड़े की प्रशंसा रोमनों द्वारा भी की जाती थी, जो एक बड़ी मात्रा में तब इसका आयात किया करते थे।

21वीं सदी के फैशन उद्योग को कपड़ों के प्रति गांधी के दृष्टिकोण और उसके द्वारा दिए गए शक्तिशाली संदेश पर विचार करने से लाभ हो सकता है। ढीले सफेद वस्त्र और धोती पहनने का गांधी का निर्णय, जिसे उस समय भारतीयता के प्रतीक के रूप में देखा जाता था, एक साहसिक प्रयास था। पीटर गोंजाल्विस ने गांधी पर एक सारगर्भित लेख लिखा, जिसका नाम था 'हाफ नेकेड फकीर-द स्टोरी ऑफ गांधीज पर्सनल सर्च फॉर सरटोरियल इंटीग्रिटी'। इस लेख में बताया गया है कि कैसे गांधी ने अपने इन कपड़ों का इस्तेमाल किया, और दक्षिण अफ्रीका में अपनी संस्कृति और अस्मिता प्रदर्शित करने के लिए ब्रिटिश परिधान के स्थान पर इस तरह से कपड़े पहनने के महत्व पर जोर दिया। दक्षिण अफ्रीका में अपने प्रवास के दौरान गांधीजी को यह अहसास हुआ कि ब्रिटिशीकृत भारतीय (अंग्रेजी शिक्षा और संस्कृति के उत्पाद) भी अंग्रेजों के बीच हंसी के पात्र हैं और उन्हें ''कुली'' कहा जाता है। भारतीयता पर जोर देने वाला उनका संदेश आज भी प्रासंगिक है

यह जानना दिलचस्प है कि भारतीय राष्ट्रीय ध्वज पारंपरिक रूप से खादी कपड़े से बनाया जाता है, जो सांस्कृतिक और ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग (KVIC) एकमात्र ऐसा संगठन है, जिसके पास इन झंडों के निर्माण का विशेषाधिकार है। केवीआईसी का मिशन स्थाई रोजगार के लिए बेहतर अवसर प्रदान करना, वंचित समुदायों के बीच आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना और ग्रामीण समाज को संपन्न बनाना तथा प्रोत्साहित करना है।

केवीआईसी जैसे संस्थान उदीयमान भारत को प्रौद्योगिकी-संचालित भविष्य के लिए तैयार करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गति देने में महत्वपूर्ण कदम उठा रहा है। इस उत्पाद की सराहना करने के लिए हाथ से बुने हुए और हाथ से काते जाने की प्रक्रिया का अनुपालन आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, 'मेक इन इंडिया' एक ऐसी बड़ी पहल है, जो जागरूक उपभोक्तावाद का

प्रतिनिधित्व करने के लिए आधुनिक उत्पादन विधियों को धयान में रखते हुए भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के साथ सरेखित उत्पाद बनाने पर केंद्रित है।

ध्यान रहे कि एक समावेशी फैशन उद्योग सामाजिक न्याय को बढ़ावा देता है। इस क्रम में उल्लेखनीय है कि वैश्विक फैशन उद्योग अपनी जवाबदेही और पारदर्शिता की कमी के कारण आज सवालों के घेरे में है। इस मुद्दे से निपटने के प्रयास, विश्वस्तर पर चल रहे हैं, 'हू मेड माई क्लॉथ्स' (फैशन रेवोल्यूशन यूके के ओर्सोला डी कास्त्रो और कैरी सोमर्स द्वारा संचालित) जैसे अभियान भारत सहित कई देशों में अब गति पकड़ रहे हैं। भारत में, 'धीमे फैशन' का आंदोलन जोर पकड़ता जा रहा है, जो बुनकरों और कारीगरों के श्रम को प्रतिष्ठित करता है, क्षेत्रीयता-स्वदेशीयता का समर्थन करता है और सांस्कृतिक स्थिरता को बढ़ावा देता है। उल्लेखनीय है कि 'धीमा फैशन', 'तेज फैशन' के विपरीत एक ऐसी संकल्पना है, जिसमें फैशन के प्रति जागरूकता का निर्माण शामिल है, जो हमें कपड़े बनाने के लिए उसकी आवश्यक प्रक्रियाओं और संसाधनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के लिए सचेत करता है। यह बेहतर गुणवत्ता वाले कपड़े खरीदने की वकालत करता है, जो टिकाऊ हो, और साथ-ही-साथ, यह इस ग्रह और इस पर रहनेवाले लोगों, जीव-जंतुओं आदि के साथ समुचित व्यवहार की पुरजोर वकालत करता है। गौरतलब है कि स्वदेशी कपास और ऊन से बने खादी के कपड़े इस आंदोलन के आदर्श उदाहरण हैं। यह उष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए उपयुक्त है और पर्यावरण के अनुकूल भी है। खादी सिर्फ 'एक राष्ट्र, एक सूत' के उत्पाद से कहीं अधिक, भारत की विविध सांस्कृतिक विरासत का प्रतीक है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक, खादी भारत की अनूठी बनावट और भारतीय जनमानस की मनोदशाओं का प्रतिनिधित्व करता है, जो हाथ से काते गए, हाथ से बुने हुए धागों से बुना गया है।

यह देखना दिलचस्प है कि कैसे खादी भारतीय स्वतंत्रता का प्रतीक बनने से लेकर परिवर्तन और प्रगति के लिए उत्प्रेरक बनने तक विकसित हुआ है? यह ठीक ही कहा गया है, ''खादी सिर्फ राष्ट्र और फैशन के लिए नहीं, बल्कि परिवर्तन के लिए भी है''। खादी और ग्रामोद्योग आयोग (केवीआईसी) को उम्मीद है कि ग्रामीण उद्योग को राष्ट्रीय ताकत में बदलने में खादी एक ताकत बनेगा । हालांकि गांधी की पसंदीदा खादी सफेद रंग और खुरदरी किस्म की थी, पर समय की मांग के अनुरूप केवीआईसी, अब खादी को विभिन्न रंगों और डिजाइनों में पेश कर रहा है। केवीआईसी अब शैंपू, खादी कैंडी और सौंदर्य प्रसाधन के उत्पादों को भी बेच रहा है। आधुनिक भारत के लिए खादी अब सांस्कृतिक प्रतीक से कहीं बढ़कर एक 'आर्थिक राष्ट्रीय ब्रांड' बन गया है।

भारत की सांस्कृतिक विरासत की प्रतीक खादी को दुनिया भर की विभिन्न संस्कृतियों ने तहे-दिल से अपनाया है। हालांकि यह सच है कि कुछ लोग इस स्वीकरण को 'सांस्कृतिक विनियोग' (कल्चरल अप्रोप्रिएशन) के रूप में देख सकते हैं, पर यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि विविध समुदायों के बीच खादी की लोकप्रियता इसकी सार्वभौमिक अपील का प्रतिफल है। दुनिया भर में गांधीवादी दर्शन और खादी का प्रभाव निर्विवाद है। यह देखना-जानना बेहद सुखद है कि कैसे लोग इन विचारों और शैलियों से प्रेरित हुए। खादी वस्त्र पीढ़ी-दर-पीढ़ी के लिए प्रेरणा का स्रोत रहा है और यकीनन आगे भी रहेगा । गांधी जी का दृष्टिकोण खादी के माध्यम से जीवित है। उदात्त विरासत और समावेशी सतत-विकास का बुनियादी सूत खादी, वस्तुतः सामासिक संस्कृति, पारस्परिक सहयोग, सहभागिता और भारतीय जनमानस के लचीलेपन की एक मिसाल है।

(लेखक भारत सरकार के एक अधिकारी हैं, जो विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस में उप महासचिव के रूप में देश का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। इस दायित्व से पूर्व भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय में प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय के निदेशक रह चुके हैं। आपने सभी आयु-वर्गों के लिए भाषा, संस्कृति और शिक्षा पर कई किताबें लिखी हैं। लेखक से ईमेल-आईडी directordaemoe@gmail.com पर संपर्क किया जा सकता है। लेख में व्यक्त किए गए विचार व्यक्तिगत हैं।)

बापू की राष्ट्र निर्माण की साधना

डॉ रामेश्वर मिश्र

भारत देश में आज हर कोई राष्ट्रवाद की बात करते दिख जाता है, हर नागरिक राष्ट्र और राष्ट्रीयता की बहस का हिस्सा बना हुआ है, किसी के लिए भारतीय राष्ट्र, हिन्दू राष्ट्र के रूप में हैं तो किसी के लिए हिन्दू राष्ट्र से इतर पंथनिरपेक्ष राष्ट्र है, हर कोई राष्ट्र की व्याख्या अपने अपने तरीके से अलग अलग करता है। राष्ट्र शब्द का उल्लेख हमें अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में मिलता है, पृथ्वी सूक्त में राष्ट्र की विस्तृत जानकारी दी गई है। विश्व में राष्ट्र शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में किया गया है, जिसमे आदर्श जीवन की संकल्पना एवं समाजोन्मुख कल्याण का भाव था लेकिन बदलते दौर राष्ट्र की एकता और अखंडता के विचार का स्थान धर्म निहित विचारों ने ले लिया, जहाँ एकता और भाईचारे का स्थान ईर्ष्या और नफरत ने ले लिया। इन्हीं विचारों से राष्ट्र का स्वरूप टूटने और बदलने लगा, विचारों की कड़वाहट और ऊंच-नीच के भावों को नगण्य करने तथा विभिन्न संस्कृतियों एवं विभिन्न भाषा वाले इस देश को एक माला में गूंथने का कार्य जिस पुण्य आत्मा ने किया उन्हें आज देश राष्ट्रपिता बापू के नाम से जानता है। महात्मा गांधी का आगमन भारतीय राजनीतिक परिपेक्ष्य में उस समय एक सामान्य घटना थी परन्तु उनके द्वारा किए गए सामाजिक एवं राजनैतिक बदलाव का योगदान असामान्य था। दक्षिण अफ्रीका से वापस लौटने के बाद गांधी जी ने किसानों के हितों के लिए चंपारण की पहली राजनैतिक यात्रा की जो भारत की जनता के लिए उनका पहला जमीनी संघर्ष था।

गांधी जी भारत आने के बाद भारत की स्वतंत्रता के लिए जो आन्दोलन किया एवं उस दौरान जो पग यात्राएं की उससे उन्होंने यह समझा कि भारत विभिन्न संस्कृतियों, विभिन्न भाषा, विभिन्न धर्मों एवं अनेक सांस्कृतिक बंधनों में बंधा हुआ है, जिसमें भारत अलग अलग विचारों और बोली के हिसाब से बंटा हुआ है। भारत की एकता और अखंडता रुपी माला के लिए विभिन्न सुगन्धों से पल्लवित भारत की विविधता एवं सांस्कृतिक बन्धनों को एकता की माला में गूंथना ही गांधी जी की राष्ट्र निर्माण की साधना थी क्योंकि गांधी जी जानते थे कि वैचारिक वैमनस्य से विखण्डित एवं भाषा की अनेकता, अस्पृश्यता के साथ-साथ धार्मिक संकीर्णता से युक्त भारत को आजादी नहीं मिल सकती हैं। इसलिए गांधी जी ने स्वतंत्रता आन्दोलन में भारतीयों की अधिक से अधिक हिस्सेदारी को सुनिश्चित

विश्व में राष्ट्र शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में किया गया है, जिसमे आदर्श जीवन की संकल्पना एवं समाजोन्मुख कल्याण का भाव था लेकिन बदलते दौर राष्ट्र की एकता और अखंडता के विचार का स्थान धर्म निहित विचारों ने ले लिया, जहाँ एकता और भाईचारे का स्थान ईर्ष्या और नफरत ने ले लिया। इन्हीं विचारों से राष्ट्र का स्वरूप टूटने और बदलने लगा...

करने के लिए राष्ट्र की एकता की साधना में जुट गए। गांधी जी के लिए राष्ट्र एक वट वृक्ष की तरह था जिसमें अलग अलग कई शाखाएं थी, परंतु इन शाखाओं का हरा भरा जीवन ही राष्ट्र रुपी वट वृक्ष को घना एवं बड़ा बनाने में सक्षम था, उसकी एक भी शाखा के सूखने से वट वृक्ष के सूखने की आशंका थी। इसलिए गांधी जी ने भारत रुपी वट वृक्ष की अलग-थलग पड़ने वाली शाखाओं को जोड़ने के लिए वैचारिक रूप से महत्वपूर्ण विषयों को सुदृढ़ करने का प्रयास किया।

राष्ट्र निर्माण की साधना में गांधी जी ने भाषायी आधार पर बंटे लोगों को जोड़ने के लिए हिन्दी का मातृभाषा के रूप चयन किया एवं वैचारिक भिन्नता पर प्रहार करने के लिए खादी और चरखा को चुना जिससे लोगों में समानता एवं अपनेपन का भाव इस स्वायत्तता की लड़ाई में जागृत हुआ। गांधी जी का राष्ट्रवाद, प्रेम-अहिंसा और बंधुत्व से परिपूर्ण था, राजेंद्र बाबू के शब्दों में मतभेदों को कम करने की दिशा में प्रेम, अहिंसा और भाईचारे को बढ़ाकर केवल भौतिक सुखों को पर्याप्त मानकर संसार में स्थाई एकता लाने में गांधी जी ने जितना योगदान किया उतना किसी भी ने नहीं किया। भारत की एकता और अखंडता के लिए गांधी जी का लक्ष्य भारतवासियों को धार्मिक, भाषाई और ऊंच-नीच, अमीर-गरीब के भेद-भाव को त्याग कर एक साथ एक मंच पर लाना था। यह वह दौर था जब भारतीयों की लड़ाई अंग्रेजों से चल रही थी, भारत का हर वासी जाने अनजाने में अपनों से ही लड़ रहा था। गांधी जी को राष्ट्र की स्वायत्तता एवं एकता के लिए एक साथ इन दोनों से लड़ना था, भारत की इस एकता के लिए गांधी जी ने अनेक महत्वपूर्ण वैचारिक कार्य किए और स्वयं भी उन्हीं विचारों का पालन किया। गांधी जी की राष्ट्र निर्माण की साधना में पहली कड़ी हिन्दी भाषा थी, गांधी जी ने भाषाई आधार पर बंटे और बिखरे भारत को एक राष्ट्र के रूप में एक साथ जोड़ने का माध्यम हिन्दी को चुना। गांधी जी की राष्ट्र निर्माण की साधना की लड़ाई मे दूसरा महत्वपूर्ण हथियार खादी और चरखा था, गांधी जी ने खादी को लोगों से लोगों को जोड़ने का एक माध्यम माना और 1918 ईस्वी में खादी कार्यक्रम की शुरुआत की। गांधी जी राष्ट्र साधना में खादी को इसलिए आवश्यक मानते थे, क्योंकि खादी में अमीर गरीब का भाव नहीं था, इसमें सब के साथ समानता का भाव निहित था। गांधी जी की खादी की दूसरी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इससे भारत की आर्थिक कमजोरी को दूर किया जा सकता था। गांधी की खादी में समानता का भाव था, इसमें विदेशी कपड़ों के प्रति विद्वेष था, खादी में अपनेपन की मिठास थी। इन खूबियों से युक्त चरखा और खादी, गांधी जी की स्वदेशी का हथियार थे। चरखा और खादी ने भारत के स्वदेशी आंदोलन को महत्वपूर्ण गति प्रदान की और अनेकता में एकता का भाव पैदा किया। सन 1918 में गांधी जी ने प्रत्येक व्यक्ति को एक घंटे चरखा पर सूत कातने का सुझाव दिया, जिसके फलस्वरूप भारत के शहरों में पले-बढ़े नौजवान अमीर-गरीब और आर्थिक रूप से कमजोर गावों के आम जनमानस के बीच की दूरी कम हुई और साथ में चरखा कातने और समान रूप से खादी के वस्त्र पहनने से ऊंच-नीच, अमीर-गरीब का भाव समाप्त हुआ। गांधी जी ने सन 1908 मे हिंद स्वराज में लिखा था कि चरखा भारत की कंगालियत दूर करने का हथियार है।

गांधी जी के राष्ट्र निर्माण की साधना में विधवा महिलाओं की निम्नतर स्थिति भी एक महत्वपूर्ण समस्या थी। भारत में विधवाओं को उस समय हेय समझा जाता था, लोगों द्वारा उन्हें अभिशाप के रूप में देखा जाता था, जिससे भारत की विधवा महिलाओं की स्थिति काफी निम्नतर हो गई थी। भारत में विधवाओं को कमतर स्थान मिलने से महिलाओं का एक बड़ा समूह कट सा गया था। भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में विधवाओं की हिस्सेदारी को सुनिश्चित करने के लिए गांधी जी ने सन 1920 से 1930 के बीच में खादी से विधवाओं को जोड़ने के लिए अभियान चलाया। जिसके फलस्वरूप भारत में अलग-थलग पड़ी विधवा महिलाओं ने भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन के नायकों के लिए खादी की टोपियां और कपड़े बुने जिससे राष्ट्र की स्वायत्तता रुपी कड़ी मजबूत हुई। गांधी जी ने एक घटना का उल्लेख करते हुए कहा कि मैंने राजमहेन्द्र और बारीसाल की पतित महिलाओं को देखा जिसमें से एक जवान महिला ने मुझसे पूछा कि आप का

चरखा हमें क्या दे सकता है, मैंने बड़ी सहजता के साथ उस लड़की को उत्तर देते हुए कहा कि खादी सिर्फ वस्त्र नहीं, मेरे लिए एक प्रतिरोध वस्त्र है। इसके आगे बढ़ते हुए गांधी जी ने सहजता से कहा कि मैं जितनी बार चरखे पर सूत निकालता हूँ, उतनी ही बार भारत के गरीबों का विचार करता हूँ। उन्होंने भारतीय लोगों को चरखे और खादी के महत्व को बताते हुए कहा कि मेरा पक्का विश्वास है कि हाथ कताई और हाथ बुनाई के पुनर्जीवन से भारत के आर्थिक और नैतिक पुनरुत्थान में बड़ी मदद मिलेगी। गांधी जी ने भारत के राष्ट्र निर्माण रुपी माला को और अधिक मजबूत करने के लिए चरखा और खादी से लोगों को जोड़ने के कार्यक्रम को और अधिक विस्तृत किया। गांधी जी ने भारत के भ्रमण के फलस्वरूप धार्मिक स्वरुप को समझा था, जिसके आंतरिक स्वरुप में काफी अन्तर विद्यमान था, भारत की एकता और राष्ट्र निर्माण की साधना की पूर्ति के लिए गांधी जी ने चरखे को ईश्वर से जोड़ा, गांधी जी ने एक अवसर पर कहा, ''चरखे में ईश्वर का दर्शन होता है''। गांधी जी खादी और चरखा को वैचारिक वैमनस्य को दूर करने का एक शक्तिशाली माध्यम समझते थे। गांधी जी की खादी में अखण्ड राष्ट्र निर्माण की साधना के लिए सामंजस्य स्थापित करने का भाव था। चरखा जाति पांति की भावना से परे था, उसमें सबके लिए समानता का भाव था। चरखा हर जाति का अपना था, इसमें न जाति-पांति की गन्ध थी, न ही ऊंच-नीच का भाव था। गांधी का चरखा राष्ट्र के लिए त्याग और बलिदान का भाव लिए हुए था जो राष्ट्र के नवनिर्माण में सहायक था। गांधी जी राष्ट्र की स्वायत्तता, अखंडता और एकता के लिए हमेशा प्रयत्नशील और विचारशील रहते थे।

गांधी जी की राष्ट्र निर्माण की साधना में दूसरी सबसे बड़ी बाधा अस्पृश्यता थी। भारत के करोड़ों लोग इस घिनौनी प्रथा के फलस्वरूप भारत के स्वायत्तता के संघर्ष से नहीं जुड़ पा रहे थे, भारत में इस समय दलितों को हेय की नजर से देखा जा रहा था। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान दलित वर्ग को अछूत की नजर से देखने का फल यह था कि भारत का एक बड़ा वर्ग स्वायत्तता के संघर्ष में कट गया था, उसका सहयोग प्राप्त करने के लिए तथा गांव के दलितों को भी मुख्यधारा से जोड़ने के लिए गांधी जी ने चरखा और खादी पर जोर दिया।

गांधी जी की राष्ट्र निर्माण की साधना में दूसरी सबसे बड़ी बाधा अस्पृश्यता थी। भारत के करोड़ों लोग इस घिनौनी प्रथा के फलस्वरूप भारत के स्वायत्तता के संघर्ष से नहीं जुड़ पा रहे थे, भारत में इस समय दलितों को हेय की नजर से देखा जा रहा था। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान दलित वर्ग को अछूत की नजर से देखने का फल यह था कि भारत का एक बड़ा वर्ग स्वायत्तता के संघर्ष में कट गया था, उसका सहयोग प्राप्त करने के लिए तथा गांव के दलितों को भी मुख्यधारा से जोड़ने के लिए गांधी जी ने चरखा और खादी पर जोर दिया। गांधी जी ने कहा कि कताई के पुनरुत्थान पर करोड़ों लोगों का नैतिक एवं आर्थिक जीवन निर्भर है। गांधी के चरखा और खादी के सृजन में समानता का भाव था, वही खादी के विकास से भारत की आत्मघाती गरीबी पर प्रहार किया जा सकता था। चरखा और खादी से गांधी जी ने दलितों के साथ-साथ जुलाहों को जोड़ने का काम किया जिससे हाशिये पर गया एक बड़ा समूह राष्ट्र निर्माण और स्वायत्तता की लड़ाई की मुख्यधारा से जुड़ गया। खादी की टोपियां स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़े स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में एकता का भाव जगाती थी।

गांधी जी ने चरखा और खादी के माध्यम से भारत की गरीबी पर आक्रमण किया था। गांवों तक चरखा को पहुंचाया था, जिससे गांवों के लोग बड़ी संख्या में स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़े। गांधी जी ने शहरों और गांवों में विद्यमान अस्पृश्यता की विचारधारा पर गहरा प्रहार किया, गांधी जी यह जानते थे कि उनकी राष्ट्र निर्माण की साधना में तथा लोगों को लोगों से जोड़ने में जाति-पति, छुआछूत एक बड़ी बाधा है। गांधी जी ने अस्पृश्यता और छुआछूत पर बोलते हुए कहा कि अस्पृश्यता हिन्दू समाज का घोर अभिशाप है, इसने समाज में दरारें पैदा करके भारत को बहुत कमजोर

किया है, अस्पृश्यता एक पाप मूलक संस्था है। गांधी जी ने अस्पृश्यता का विरोध करते हुए कहा कि आज से कोई किसी को जन्म के आधार पर अछूत नहीं मानेगा, सार्वजनिक कुओं, सार्वजनिक विद्यालयों, सार्वजनिक सड़कों और अन्य संस्थाओं के उपयोग के मामले में उन्हें वे अधिकार प्राप्त होंगे जो अन्य वर्गों को प्राप्त है। गांधी जी भारतीय समाज में व्याप्त इस कुव्यवस्था को राष्ट्र की उन्नति में बाधक समझते थे। गांधी जी को यह ज्ञात था कि स्वस्थ राष्ट्र के नव निर्माण के लिए अस्पृश्यता रुपी घातक बीमारी पर प्रहार आवश्यक है। गांधी जी का मानना था कि बिना सबको साथ लिए राष्ट्र की स्वायत्तता की लड़ाई कमजोर होगी, वैचारिक रूप से अलग-थलग पड़े राष्ट्र की एकता को मूर्त नही किया जा सकता है जब तक भारत में अस्पृश्यता रुपी वैचारिक भिन्नता विद्यमान है। सन 1933 में गांधी जी ने एक संवाददाता से पूछा कि आप ऐसा क्यों मानते हैं कि स्वराज अस्पृश्यता की सम्पत्ति से अलग कोई वस्तु है। गांधी जी गांव के लोगों को स्वायत्तता आन्दोलन से जोड़ना चाहते थे, इसके लिए उन्होंने शहरी और ग्रामीण के बीच का अन्तर समाप्त करने का प्रयास किया। गांधी जी ने शहरी लोगों द्वारा गांव के प्रति किये जा रहे भेदभाव का कई बार विरोध किया। गांधी जी ने गांव में अस्पृश्यता के विरुद्ध उपवास किया और इस निष्कर्ष पर पहुंच गए थे कि अस्पृश्यता को समाप्त किये बगैर राष्ट्र निर्माण की साधना को पूर्ण नहीं किया जा सकता है। सन 1930 में अस्पृश्यता के खिलाफ गांधी जी उपवास पर बैठे और उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता के खिलाफ अभियान में अब अछूत नाम से चिन्हित लोगों की रश्मि अस्पृश्यता के उन्मूलन से बहुत कुछ ज्यादा का समावेश होने लगा, शहर में रहने वाले लोगों के लिए गांव अछूत बन गए थे और इस व्याप्त अस्पृश्यता को खत्म करने के लिए ही ग्रामीण उद्योगों का नव जीवन बहुत आवश्यक है।

गांधी जी ने दलितोद्धार के लिए अन्तिम दिन तक संघर्ष किया, गांधी जी अछूतों के लिए हरिजन शब्द का इस्तेमाल करते थे, उनका मन हमेशा भारत की जाति व्यवस्था को देखकर कुंठित रहता था। गांधी जी का ऐसे धर्म में विश्वास था, जिसमें ऊंच-नीच, जाति-पांति, रंगभेद के लिए कोई स्थान नहीं था, उन्होंने ऐसी प्रत्येक बात को ठुकरा दिया जो विवेक और मानवता के विरुद्ध थी। गांधी जी का मानना था कि अस्पृश्यता में विश्वास ईश्वर का निषेध है, गांधी जी ने ऐसे मन्दिरों में प्रवेश करने से इंकार

कर दिया, जहां अछूतों के लिए प्रवेश निषेध था। गांधी जी के धर्म का स्वरुप सर्वोदय का स्वरुप था जिसमें दरिद्रनारायण की सेवा का भाव था। गांधी जी ने हिन्द स्वराज में यह कहा कि अंग्रेजों ने हमें यह सिखाया है कि हम पहले एक राष्ट्र नहीं थे और एक राष्ट्र बनने में हमें कई सदियाँ लग जायेगी। इस बात का कोई आधार नहीं है कि यहाँ विभिन्न धार्मिक समूहों के लोग रहते है और हर कदम पर सांस्कृतिक विभिन्नताएं मौजूद है तो इस आधार पर यह कहना गलत है कि भारत एक राष्ट्र नहीं है। नकारात्मकता की विचारधारा के लिए यहां विभिन्नता शब्द का इस्तेमाल किया जाता है जबकि वास्तव में यहां विविधता शब्द का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। गांधी जी ने स्वस्थ समानता युक्त राष्ट्र निर्माण के लिए अनेक प्रयत्न किये। गांधी जी ने हमेशा भारत में व्याप्त असमानता एवं कुविचारों का विरोध किया। गांधी जी का केवल एक ही लक्ष्य था भारत में भाईचारा, प्रेमयुक्त समानता का व्यवहार सबके साथ किया जाय। गांधी जी के कार्यों एवं विचारों में हमेशा एक अखण्ड भारत का भाव सन्निहित था।

गांधी जी स्वस्थ एवं प्रसन्न राष्ट्र के निर्माण के लिए हमेशा तत्पर रहे जिसके लिए उन्होंने समाज के प्रबुद्ध वर्गों के लोगों को अछूत वर्ग के लोगों के साथ जोड़ा जिससे रूढ़िवादी विचारों का बहिष्कार किया जा सका। गांधी जी ने अपना पूरा जीवन सांप्रदायिक सद्भाव स्थापित करने के लिए समर्पित कर दिया। गांधी जी ने अपने सपनों का भारत में कामना की है कि ''मै एक ऐसे भारत की कामना करूंगा, जिसमें सबसे गरीब लोग महसूस करेंगे कि यह उनका देश है जिसके निर्माण में उनकी प्रभावी आवाज हो, एक ऐसा भारत जिसमे कोई उच्च वर्ग और निम्न वर्ग नहीं होगा।'' लोगों का एक ऐसा भारत जिसमे सभी समुदाय पूर्ण सद्भाव से रहेंगें। अपनी राष्ट्र साधना के बल पर ही महात्मा गांधी भारत के अन्य समुदाय वर्ग के साथ भारत के स्वायत्ता आन्दोलन में प्रवेश किया, उनके साथ पारसी, सिक्ख, मुसलमान, जैन एवं इसाई वर्ग कन्धे से कन्धा मिलाकर चल पड़ा। गांधी युग के प्रारम्भ से ही भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी जी का सक्रिय दखल देखने को मिलता है। भारत की स्वायत्ता की लड़ाई में महात्मा गांधी जी का व्यक्तित्व एक विचारधारा के रूप में उभरा, उनके व्यक्तित्व की मिठास थी कि वैचारिक रूप से मतभेद होते हुए भी राजनैतिक नायक सुभाष चन्द्र बोस, बाल गंगाधर तिलक, बंकिम चन्द्र पाल, लाला लाजपत राय जैसे शीर्ष नेताओं का मनभेद नही था, वरन उनके मन में गांधी जी के प्रति अपार श्रद्धा थी। गांधी जी की यह प्रमुख विशेषता थी कि नरम-गरम दल हो या अमीर-गरीब, ब्रिटिश हो या भारतीय, हिन्दू हो या मुसलमान गांधी जी के आश्रम का दरवाजा हमेशा सब के लिए खुला रहता था, उनके भाई-चारे का विचार अनायास ही सबको जोड़ता था। गांधी जी ने हमेशा ख्याल रखा कि उनसे जुड़ने वाले लोगों का विश्वास कभी कमजोर न पड़ने पाए। इसके लिए वे आश्रम में आये सभी लोगों के साथ समानता का व्यवहार करते थे।

इस तरह गांधी जी के राष्ट्र निर्माण की साधना के दो मजूबत पक्ष थे, पहला ब्रिटिशों से मुक्त स्वायत्त भारत की संकल्पना, दूसरा विचारों के वैमनस्य से युक्त बिखरे हुए अनेक वैचारिक दुराग्रहों से युक्त भारत को एकल भारत के साथ समाजिक समानता वाले राष्ट्र का निर्माण करना। ब्रिटिशों से भारत की स्वतंत्रता के लिए गांधी जी ने चंपारण, खेड़ा, असहयोग, सविनय अवज्ञा, भारत छोड़ो जैसे बड़े आन्दोलनों का नेतृत्व किया तो वैचारिक रूप से एकल भारत के लिए हिन्दी, अस्पृश्यता उन्मूलन, चरखा, स्वच्छता अभियान, अछूतोद्धार आदि मत्वपूर्ण सृजनात्मक कार्य किये जिसने समय के साथ साथ वैचारिक रूप से विखंडित भारत को एकल एवं श्रेष्ठ भारत में बदल दिया फलस्वरूप भारतवासी सब भेद-भावों को मिटाकर स्वतंत्रता आन्दोलन में साथ आये।

(सहायक प्राध्यापक
संजीव अग्रवाल ग्लोबल एजुकेशनल विश्वविद्यालय, भोपाल)

संपर्क: 8765595416

गांधी दर्शन को हिंदी साहित्य में अभिव्यक्त करते कवि : सुमित्रानंदन पंत

संतोष पटेल

सुमित्रानंदन पंत की रचनाओं में जीवन जगत आदि के संबंध में बड़े ही सुंदर और गंभीर विचार मिलते हैं। गांधी दर्शन, छायावाद, प्रगतिवाद, आध्यात्मवाद, रहस्यवाद और मानववाद संबंधी अपनी सभी कविताओं में कवि ने इन विषयों पर अपनी विचारधारा व्यक्त की है।

'परिवर्तन' शीर्षक कविता पंत की एक प्रौढ़ भाषी कविता है जिसमें कवि ने अनित्य जगत के संबंध में अपना विचार व्यक्त करते हुए प्रकृति की भयंकरता और संसार के क्षणभंगुरता का बड़ा ही स्वभाविक वर्णन किया है।

'परिवर्तन' शीर्षक कविता के पहले कवि पंत कल्पनालोक में विचरण करने वाले गीत खग के रूप में दिखते थे। मात्र प्रकृति की रमणीयता और सुंदरता पर मुग्ध हो कर कवि जीवन और जगत की वास्तविकता को भूल गया था। प्रेम और सौंदर्य ही उसके काव्य के प्रधान विषय थे। 'पल्लव' एक प्रकार से प्रकृति की सुंदरता कवि के प्रेम संबंधित दृष्टिकोण का ही काव्य है किंतु पिता की मृत्यु और स्वयं कवि की लंबी बीमारी ने कवि को वास्तविक जगत से साक्षात्कार करावाया। कवि अब जीवन की वास्तविकता को समझने लगा। कल्पनालोक की परियों के साथ रचने वाला कवि धरती पर आकर मानव के साथ उसके सुख दु:ख के साथ प्रकृति और जगत के रहस्य को समझने लगता है। दरअसल कविता की रीढ़ है तो यह रीढ़ 'परिवर्तन' शीर्षक कविता में प्राप्त है। पहली बार इस कविता में कवि के दार्शनिक विचार देखने को मिलते हैं। कवि साधना को ही जीवन का बहुमूल्य तत्व मानता है:

''अलभ्य है ईष्ट अत: अनमोल
साधना ही जीवन का मोल ।''

'परिवर्तन' के इन पंक्तियों में जीवन के मर्म को उसके वास्तविक रहस्य को पहली बार स्वीकार किया गया है।

'पल्लव' के पश्चात 'गुंजन' में कवि का दार्शनिक रूप स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। पंत ने भी लिखा है–

''मैं पल्लव से गुंजन में अपने को सुंदरम से शिवम की भूमि पर पदार्पण करते हुए पाता हूं।''

'गुंजन' का कवि पंत जीवन का कवि है। वह मानव के सुख–दुख के साथ संपर्क बढ़ाता है। जीवन की पूर्णता सुख दु:ख के समन्वय में ही है। मात्र सुख ही जीवन की शोभा नहीं और केवल दु:ख ही जीवन को उर्वर नहीं बनाता जब तक सुख और दु:ख बारी–बारी से नहीं आते तब तक

'परिवर्तन' शीर्षक कविता के पहले कवि पंत कल्पनालोक में विचरण करने वाले गीत खग के रूप में दिखते थे। मात्र प्रकृति की रमणीयता और सुंदरता पर मुग्ध हो कर कवि जीवन और जगत की वास्तविकता को भूल गया था। प्रेम और सौंदर्य ही उसके काव्य के प्रधान विषय थे।

जीवन पूर्ण नहीं बनता ।

कवि देखता है कि संसार में कहीं दुख ही दुख है और कहीं सुख ही सुख। रोना और हंसना, मिलना और बिछुड़ना, जीवन में लगे रहते हैं। दिन के बाद रात, सुबह के बाद शाम, शीत के बाद ताप प्रकृति के अपरिहार्य नियम हैं इसलिए कवि मानव के सुख-दुख के संबंध में अपना विचार व्यक्त करते हुए प्रकृति से उदाहरण देता है:

''यह सांझ उषा का आंगन
आलिंगन विरह मिलन का
चिर हास अश्रुमय आनन
रे इस मानव जीवन का''

कवि पंत मानवतावादी कवि हैं। उन्होंने गांधीवादी जीवन दर्शन को अपनी कविताओं में बड़ी कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया है। जीवन की सार्थकता संसार का त्याग कर वन में धूनी रमाने में नहीं है। सच्चा सुख अपने अपने आप को कष्टों और संसार के संघर्षों में डालकर ही प्राप्त किया जा सकता है। स्वर्ण को जब आग में तपाया जाता है तब उसमें निखार आता है। व्यक्ति जब तक संसार की ज्वाला में संघर्षों की अग्नि में नहीं तपता तब तक वह पूर्ण नहीं बनता।

'तप' शीर्षक कविता में कवि ने इसी रहस्य का उद्‌घाटन किया:

''तप रे, मधुर मन!
विश्व-वेदना में तप प्रतिपल,
जग-जीवन की ज्वाला में गल,
बन अकलुष, उज्जवल औ' कोमल
तप रे, विधुर-विधुर मन!।''
(कविता : तप रे)

इतना ही नहीं कवि विश्व मानवतावाद का समर्थक है। वह विश्व बंधुत्व की भावना से सारे संसार को पूर्ण देखना चाहता है। वह मनुष्य मनुष्य के बीच संबंध स्थापित करना चाहता है। कवि मुक्ति का उपासक नहीं है क्योंकि मुक्ति तो स्वयं एक बंधन है इसलिए संसार वासियों को गंधयुक्त और मुर्तवान बनने की सहमति देता हुआ कह पड़ता है:

तेरी मधुर-मुक्ति ही बंधन,
गंध-हीन तू गंध-युक्त बन,
निज अरूप में भर-स्वरूप, मन,
मूर्तिमान बन, निर्धन!
गल रे गल निष्ठुर-मन! (कविता:तप रे)

युगांत, युगवाणी और ग्राम्या में कवि पंत मार्क्सवादी जीवन दर्शन उपस्थित करते हैं। एक प्रकार से कवि भारतीय आध्यात्मवाद के प्रति गांधीवाद और मार्क्स के साम्यवाद का संबंध में करता दिखलाई पड़ता है। कवि अच्छी तरह जानता है कि गांधीवाद मानवता का संदेश देता है और साम्यवाद सामूहिक जीवन विकास का सघन साधन प्रस्तुत करता है:

''मनुष्य का तत्व सिखाता निश्चय हमको गांधीवाद,
सामूहिक जीवन विकास की साम्य योजना है अविवाद।''
(युगवाणी कविता से)

1940 के पश्चात विशेष कर स्वतंत्र भारत में कवि पंत मानव के आध्यात्मिक विकास पर जोर देते हुए दिखाई देते हैं। आज के युग का निदान मार्क्स का समाजवाद भी नहीं है।

कवि आज के समस्याओं का निदान अरविंद दर्शन आता है। वह भूतवाद और आध्यात्मवाद का समन्वय करता हुआ मानव के सांस्कृतिक विकास के लिए नई सभ्यता स्थापित करना चाहता है। कवि को अरविंद दर्शन में ही सांस्कृतिक अभ्युत्थान का स्वर्ण प्रभात दिखाई पड़ता है और लगता है कि पंत कविता की अंतिम परिणीति भी आधयात्मिक उल्लास में होगी। तभी तो पंत नयी मानवता की स्थापना के लिए कह पड़ते है:

क्यों न एक हों मानव-मानव सभी परस्पर
मानवता निर्माण करें जग में लोकोत्तर।
जीवन का प्रासाद उठे भू पर गौरवमय,
मानव का साम्राज्य बने, मानव-हित निश्चय।
(दो लड़के कविता से)

इस प्रकार अपनी कविताओं में सुमित्रानंदन पंत चिंतक की भांति सत्य का आकलन करते हुए दिखाई पड़ते हैं जग और जीवन के उनका गैरों से होती हुई उनकी कविता धारा सतवत गतिशील है।

संपर्क:

सहायक कुलसचिव (प्रशासन), दिल्ली कौशल व उद्यमिता विश्वविद्यालय, द्वारका, नई दिल्ली-110077

विश्वभर में फैल रहा हिन्दी का साम्राज्य

डॉ. अर्पण जैन 'अविचल'

जीवन और जतन में, प्रेम और विरोध में, राग और द्वेष में, विरोध और समर्थन में, संवाद और सम्बन्ध में, व्यापार और विनिमय आदि में भी कोई तत्व यदि सहायक है तो वह केवल भाषा है। किसी भी राष्ट्र की अस्मिता और अखण्डता में कई कारक उत्तरदायी होते हैं, उनमें से एक कारक उस राष्ट्र का भाषाई ढाँचा भी है। भाषा न केवल लोगों के बीच संवाद का माध्यम होती है बल्कि समाज, संस्कृति और जनमानस के बीच समन्वय का केन्द्र होती है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि भारत 'वसुधैव कुटुम्बकम' की अवधारणा वाला राष्ट्र है। इसका अर्थ यह हुआ कि समस्त विश्व एक परिवार है और इसी परिवार के बीच समन्वय का केन्द्र उनके बीच की भाषा है। भारत की प्रतिनिधि भाषा के रूप में सर्वमान्य भाषा हिन्दी ही है। कहीं भी भारत का भाषाई परिचय दिया जायेगा तो निश्चित तौर पर वह परिचय हिन्दी से आरम्भ होगा। भारत में जन्मी किन्तु वर्तमान में विश्व के तमाम उन राष्ट्रों में भी जहाँ भारतवंशी निवास कर रहे हैं, उन सभी देशों में हिन्दी पहुँचने लगी है। आज विश्व के 100 से अधिक देशों में हिन्दी भाषी भारतीय रहते हैं। गर्व इस बात पर भी है कि 50 से अधिक देशों के विश्वविद्यालयों में तो हिन्दी पढ़ाई भी जाती है।

भारत की वैश्विक मजबूती के साथ ही जनसंख्या की दृष्टि से भी भारत विश्व का सबसे बड़ा राष्ट्र है और जिस राष्ट्र की आबादी अधिक उसका बाजार भी सबसे बड़ा माना जाता है क्योंकि उत्पाद की खपत अधिक होती है, उपभोक्ता अधिक होते हैं। जिस राष्ट्र का सबसे बड़ा बाजार होता है, उसकी भाषा, संस्कृति और निर्णयों का महत्त्व भी उतना ही अधिक होता है। इस समय भारत के वर्चस्व के बढ़ने से भारत की भाषा यानी हिन्दी की स्वीकार्यता भी विश्व में अधिक हो गई है। विश्व की सबसे बड़ी भाषा के रूप में हिन्दी की स्थापना ने विश्व को हिन्दी के प्रति उदारभाव रखकर सीखने/समझने के लिए मजबूर भी कर दिया है। जिस तरह अमेरिका में काम/काज के लिए अंग्रेजी सीखना अनिवार्य है, "फ्रांस में कामकाज के लिए "फ्रेंच आवश्यक भाषा है, चाइना में काम करने के लिए मेंडीरिन भाषा की समझ होनी जरूरी है, उसी तरह विश्व के किसी भी देश से आने वाले लोग जो भारत में व्यापार, नौकरी या कामकाज करना चाहते हैं, उन्हें हिन्दी की समझ होना अनिवार्य है।

भाषा न केवल लोगों के बीच संवाद का माध्यम होती है बल्कि समाज, संस्कृति और जनमानस के बीच समन्वय का केन्द्र होती है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि भारत 'वसुधैव कुटुम्बकम' की अवधारणा वाला राष्ट्र है। इसका अर्थ यह हुआ कि समस्त विश्व एक परिवार है और इसी परिवार के बीच समन्वय का केन्द्र उनके बीच की भाषा है। भारत की प्रतिनिधि भाषा के रूप में सर्वमान्य भाषा हिन्दी ही है।

भारत में काम करना है तो हिन्दी में सबल होना जरूरी है और इसीलिए विश्व के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी सिखाई जाने लगी है। जिस तरह भारत में अंग्रेजी या अन्य भाषाओं को सीखाने के कोचिंग संस्थान खुले हुए हैं, उसी तरह विश्व के कई देशों में हिन्दी सिखाने के लिए शिक्षक, ऑनलाइन ट्यूटर, पेशेवर हिन्दी कार्यशालाओं का संचालन किया जा रहा है ताकि भारत से आर्थिक सम्बन्ध, कामकाजी सम्बन्ध या कहें सांस्कृतिक संबंधों का ताना-बाना मजबूती से बना हुआ रहे और यह सब हिन्दी के आधार पर ही बन सकता है।

जैसे अठारहवीं सदी ऑस्ट्रिया और हंगरी की रही है तो उन्नीसवीं सदी ब्रिटेन और जर्मनी के प्रभुत्व को दिखाती है, वैसे ही बीसवीं सदी अमेरिका एवं सोवियत संघ के प्रभुत्व को दिखाती रही, उसी तरह वर्तमान सदी यानी 21वीं सदी भारत और चीन के प्रभाव की स्वीकार्यता का दर्शन करवा रही है। कोरोना जैसी भयावह बीमारी के वैक्सीन का निर्माण भारत ने करके विश्व के अन्य देशों को भी सहायतार्थ उपलब्ध करवाया। वर्तमान में रूस-यूक्रेन के बीच महीनों से जारी जंग के दौरान भी यूक्रेन से हजारों भारतीय छात्र सकुशल भारत आए, उस दौरान उन छात्रों ने केवल तिरंगा ही अपने हाथों में रखा, यह भी सम्पूर्ण विश्व ने देखा और भारत के वर्चस्व को स्वीकार किया। इसी तरह चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर कदम रखने वाला देश एकमात्र भारत ही है। वर्तमान में भारत और चीन तेजी से प्रगति करने वाली अर्थव्यवस्थाओं में से हैं तथा विश्व स्तर पर इनकी स्वीकार्यता और महत्ता स्वत: बढ़ रही है। इन दोनों देशों के पास भरपूर प्राकृतिक संपदा और भरपूर मानव संसाधन हैं जिसके कारण ये भावी वैश्विक संरचना में उत्पादन के बड़े स्रोत बन सकते हैं। शक्ति सम्पन्नता का केंद्र भी इन दोनों देशों में ही होने से विश्व इस बात को स्वीकार भी रहा है और इनके वर्चस्व की तूती भी विश्व में बोल रही है। भारत के प्रधानमंत्री की छवि और वैश्विक दूरदृष्टि भारत को लगातार विश्व में अव्वल बना रही है। इन्हीं कारणों से भारत की अत्यधिक सबलता हिन्दी को भी वैश्विक रूप से उतना ही मजबूत कर रही है।

भारतीय सिनेमा का भी वैश्विक विस्तार हो रहा है, विश्व के कई देशों में बॉलीवुड की फिल्में, ओटीटी का प्रदर्शन जारी है, इसी तरह व्यापार का यह रास्ता भी भारत ने हिन्दी के सहारे ही विश्व में फैलाया है। यही नहीं बल्कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कदम निवेश भारत में बढ़ रहे हैं जो आर्थिक रूप से भारत के लिए लाभप्रद भी है।

विश्व में भारत की उदारवादी छवि होने से विश्व बाजार का रुख भारत की ओर बड़ी आशा की नजर से देख रहा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ लगातार भारत में निवेश भी बढ़ा रही हैं और कामकाज का भी विस्तार कर रही हैं। उन सभी कंपनियों में अंग्रेजी के अलावा हिन्दी जानना, लिखना और समझना अनिवार्य जैसा ही है। वैसे भी कम्पनी के दफ्तर के बाहर यदि व्यक्ति को चाय भी पीना हो तो संवाद करने के लिए हिन्दी भाषा को प्राथमिकता देनी ही होगी, इस कारण से भी विश्व के अनेक देश हिन्दी सिखा रहे हैं। हिन्दी विश्व की पहली भाषा बन चुकी है। वॉशिंगटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सिडनी कुलबर्ट द्वारा 1970 ई. में इकट्ठे किए गए आँकड़ों के अनुसार हिन्दी विश्व में तीन बड़ी भाषाओं में से एक है, शेष दो भाषाएँ चीनी और अंग्रेजी। हिन्दी एशिया महाद्वीप की ही नहीं बल्कि विश्व में हिन्दी भाषियों की संख्या वर्तमान में अंग्रेजी जानने वालों से भी अधिक बढ़ती जा रही है।

वर्तमान में हिन्दी के माध्यम से ही विश्व की जनता से भारत की जनता का संवेदनात्मक रिश्ता कायम हुआ है। प्रो. हरमोहेन्द्र सिंह का कहना है कि 'अमेरिका व कनाडा जैसे देशों में हिन्दी भाषा की उन्नति तथा विकास का मसौदा तैयार कर संसद में अलग से बजट पारित किया गया। अतः विश्व में हिन्दी का स्थान उसकी समाहार शक्ति और विशालता का परिचय है। विश्व बाजार में भारत और दक्षिण एशियाई संगठन की बढ़ती हुई भूमिका की पृष्ठभूमि में हिन्दी के महत्त्व में वृद्धि होती जा रही है। 21वीं सदी में वैश्विक बाजार में देखा जाए तो विश्व के एक बड़े बाजार में शिक्षित-अशिक्षितों के व्यवहार की भाषा भी हिन्दी है।

चीन, इंग्लैंड, अमेरिका तथा अन्य यूरोपीय देशों में व्यापार के आयात-निर्यात के लिए किसी एक भाषा की आवश्यकता को पूरा करती है हिन्दी भाषा। यह एक बड़े समाज की भाषा है, उसका एक बृहतर रूप भी है, जिसमें न केवल भारत की बल्कि भारत के बाहर त्रिनिदाद, मॉरिशस, फिजी, अमेरिका, इण्डोनेशिया, मलेशिया व गुयाना जैसे देशों में हिन्दी के अनेक रूप विकसित हो रहे हैं। अमेरिका जैसे बड़े देश की बात करें तो स्वामी विवेकानंद जी से हिन्दी की यात्रा आरम्भ हुई है। 1958 में अमेरिका के एक विश्वविद्यालय में हिन्दी सीखने वालों की संख्या 14 थी, 1974-75 में यह बढ़कर 379 हो गई, वर्तमान में 2023 में यह आँकड़ा एक लाख के पार है। इन आँकड़ों से ही अमेरिका जैसे देश में हिन्दी की प्रगति का पता चलता है। इसी तरह फिजी, सूरीनाम, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, दुबई, यूएई, मॉरीशस, नॉर्वे, जर्मनी, साउथ अमेरिका जैसे कई देशों में हिन्दी सीखने वालों का न केवल अस्तित्व है बल्कि बोलने, व्यवहार करने वालों का प्रभाव भी है। इन्हीं सब कारणों से दिखाई देता है कि वैश्विक रूप से लगातार हिन्दी विस्तारित हो रही है बल्कि मजबूती से दखल भी रख रही है। भारत की सरकार को इस दृष्टि से देखते हुए विस्तार हेतु कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, अंतरराष्ट्रीय संबंधों की मजबूती के आधार पर भी हिन्दी के साथ सांस्कृतिक संबंध बनाना चाहिए। फलस्वरूप हिन्दी भाषियों के कारण भारत का भला ही होगा। शेष हिन्दी मजबूत हो ही रही है, उसके लिए भारत से मातृभाषा उन्नयन संस्थान ने हिन्दी आन्दोलन भी छेड़ रखा है जो लगातार अन्य देशों में हिन्दी के विस्तार के लिए प्रयास भी कर रहा है और आंशिक सफलता अर्जित भी हुई है। इस तरह सरकार और दूतावास को मिलकर भी भाषा के माध्यम से संस्कृति और सांस्कृतिक संबंधों का ताना-बाना बुनना चाहिए। हिन्दी का लोकव्यापी जयघोष होता रहेगा।

वर्तमान में हिन्दी के माध्यम से ही विश्व की जनता से भारत की जनता का संवेदनात्मक रिश्ता कायम हुआ है। प्रो. हरमोहेन्द्र सिंह का कहना है कि 'अमेरिका व कनाडा जैसे देशों में हिन्दी भाषा की उन्नति तथा विकास का मसौदा तैयार कर संसद में अलग से बजट पारित किया गया। अतः विश्व में हिन्दी का स्थान उसकी समाहार शक्ति और विशालता का परिचय है।

संपर्कः
204, अनु अपार्टमेंट, 21-22 शंकर नगर, इंदौर (म.प्र.), मो.: 9893877455

प्रकृति हमारी सबसे अच्छी शिक्षक है।

सीताराम गुप्ता

गांधी जी ने कहा है कि ये धरती अथवा प्रकृति हमारी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में तो सक्षम है लेकिन हमारे लालच को पूर्ण करने में सक्षम नहीं। हमने अपनी लोभवृत्ति व अपरिग्रहवृत्ति के अभाव के कारण अपनी धरती व प्रकृति को नष्ट करने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी है। हमने प्रकृति का बेतहाशा दोहन तो किया है लेकिन उसके संदेश को जानने-समझने का प्रयास कम ही किया है। यदि मानव जाति व इस धरती को नष्ट होने से बचाना है तो गांधी जी की बात के मर्म को समझना होगा। गांधी जी की बात के मर्म को समझने के लिए प्रकृति व उसके संदेश को समझना और आत्मसात करना होगा। इसके अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प है ही नहीं।

कुछ दिन पूर्व की बात है शहतूत के एक घनी छाँव वाले वृक्ष के नीचे खड़ा था। और भी कई वृक्ष थे आसपास। अलग-अलग प्रजातियों के लेकिन साथ-साथ उगे, पले-बढ़े और खड़े। सबके अपने-अपने अलग-अलग तने थे लेकिन शाखाएँ और पत्तियाँ एक दूसरे से उलझी हुई। यहाँ उलझी हुई कहना अधिक उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि वे उलझी हुई नहीं अपितु मिली हुई थीं। वे परस्पर गुत्थमगुत्था नहीं अपितु आपस में गलबहियाँ डाले हुए प्रतीत हो रही थीं। सभी पेड़ों की टहनियों और पत्तों ने पड़ोसी पेड़ों की टहनियों और पत्तों के लिए जैसे जगह सुरक्षित रखी हुई थी, एक स्पेस क्रिएट किया हुआ था। कहीं भी द्वंद्व, विरोध अथवा प्रतियोगिता दिखलाई नहीं पड़ रही थी। जो ऊपर उठना चाहता था उसके लिए कोई अवरोध नहीं था।

शहतूत की पत्तियाँ धीरे-धीरे हिल रही थीं। पत्तियों के स्पंदन में स्पष्ट रूप से कोई संगीत तो नहीं सुनाई पड़ रहा था लेकिन उनके हिलने में एक लय और ताल अवश्य दिखलाई पड़ रही थी। साथ ही अनेक प्रकार के जीव-जंतु भी इस शहतूत के वृक्ष की जड़ों, शाखाओं और पत्तियों पर उपस्थित थे। जिज्ञासा हुई कि देखूँ कौन-कौन से जीव-जंतु इस वृक्ष पर मौजूद हैं। लगता था पाँच-सात किस्म के जीव-जंतु तो अवश्य ही उपस्थित होंगे। देखा पेड़ की जड़ों के पास ही थोड़ी दूरी पर कुछ बिल बने हुए थे जहाँ एक बिल के अंदर से एक चूहा कभी बाहर आ रहा था तो कभी अंदर जा रहा था। इस चूहे की कारगुजारियों से बेखबर कुछ गिलहरियाँ इस

गांधी जी ने कहा है कि ये धरती अथवा प्रकृति हमारी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में तो सक्षम है लेकिन हमारे लालच को पूर्ण करने में सक्षम नहीं। हमने अपनी लोभवृत्ति व अपरिग्रहवृत्ति के अभाव के कारण अपनी धरती व प्रकृति को नष्ट करने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी है। हमने प्रकृति का बेतहाशा दोहन तो किया है लेकिन उसके संदेश को जानने-समझने का प्रयास कम ही किया है।

शहतूत के पेड़ के तने और शाखाओं पर उछल-कूद के साथ-साथ चिक-चिक की आवाज भी निकाल रही थीं।

आवाजों से पता चलता था कि वृक्ष पर कई प्रकार के पक्षी थे जिनमें से कई घने पत्तों में छिपे हुए थे। कुछ तोते थे जो अपने रंग के कारण पत्तों से एकाकार हो जाने के कारण तभी दिखलाई पड़ते थे जब वे टें-टें टें-टें करते थे। एक अपेक्षाकृत मजबूत सी टहनी पर कुछ कौवे विराजमान थे जो अपनी कर्कश आवाज के बावजूद आकर्षक लग रहे थे क्योंकि वे किसी को कोई हानि नहीं पहुँचा रहे थे। इसी दौरान कुछ अपरिचित परिंदे उड़ते हुए आए और कौवों को वहाँ आराम करते देख उस वृक्ष पर बैठने का मोह त्याग कर वापस हो लिए। उनके हाव-भाव से सम्मान झलकता था और लगता था मानो कह रहे हों कि भाई साहब आप लोग यहाँ पहले ही से आराम कर रहे हैं अत: हम किसी अन्य खाली पेड़ की दूसरी शाखा ढूँढ़ लेंगे। उसके बाद कुछ कबूतर उड़ते हुए आए और एक खाली सी डाल पर बैठ कर वहीं गुटरगूँ-गुटरगूँ का चिरपरिचित राग अलापने लगे।

परिंदों का कलरव बदस्तूर जारी था। कई प्रजातियों की चिड़ियाँ जो प्राय: देखी जा सकती हैं अपने-अपने सुर में चहक रही थीं लेकिन साथ ही कुछ नितांत अपरिचित और कभी-कभार दिखलाई पड़ने वाली प्रवासी चिड़ियाँ भी थीं जो अपने प्रवास के मार्ग में थककर कुछ देर के लिए बैठ गई थीं और अपनी उपस्थिति दर्ज करवाकर पुन: अपने लंबे सफर पर निकलने वाली थीं। वृक्ष की शाखाओं और पत्तों में छुपे अन्य प्रजातियों के कुछ और भी शांत-शर्मीले परिंदे अवश्य होंगे, जो होते तो हैं, पर दिखलाई कभी नहीं पड़ते। हाँ कई प्रकार के मच्छर-मक्खियाँ व अन्य कीट-पतंग अवश्य अत्यंत मुखर थे, और अपनी-अपनी स्वर रूपी सारंगियों और तानपुरों से सब का घ्यान आकर्षित कर रहे थे। न तो कोई उन्हें उड़ने से रोकने का प्रयास कर रहा था और न ही पेड़ पर बैठने से रोकने का।

इसी दौरान कुछ खूबसूरत व आकर्षक तितलियाँ भी नजाकत से मँड़राती हुई आ पहुँचीं। जहाँ तितलियाँ हों वहाँ मधुमक्खियाँ न हों ऐसा हो ही नहीं सकता। मधुमक्खियाँ शहद बनाने के लिए आसपास के पौधों पर लगे फूलों से रस चूस रही थीं लेकिन क्या मजाल कि किसी फूल की पंखुड़ी पर बाल बराबर भी कोई निशान पड़ जाए या उसका सौंदर्य रत्ती भर भी कम हो जाए। तभी अपनी जबरदस्त उपस्थिति दर्ज कराने एक भ्रमर भी वहाँ आ पहुँचा और वह भी लगा पंचम सुर में अपना राग अलापने। वही भ्रमर जो कठोर काष्ट को काट सकता है, लेकिन सूर्यास्त के समय कमल के फूल में बंद हो जाने पर फूल की पंखुड़ियों को तनिक भी हानि नहीं पहुँचाता। वह अगले सूर्योदय तक चुपचाप वहीं दम साधे प्रतीक्षा करता रहता है। यहाँ भी उससे किसी अनिष्ट की आशंका नहीं है। हेलिकॉप्टर की तरह उड़ती हुई कुछ बर्रे भी अपने करतब दिखलाने से बाज नहीं आ रही थीं। सब अपनी-अपनी धुन में मस्त थे। कोई किसी की राह का रोड़ा नहीं बन रहा था, किसी का रास्ता नहीं काट रहा था और न ही कोई किसी से टकरा रहा था। लगता था सबकी उड़ान के मार्ग पूरी तरह से व्यवस्थित, निश्चित और नियंत्रित थे।

पेड़ के तने के कुछ निकट गया तो पाया कि वहाँ भी असंख्य चींटियाँ ऊपर-नीचे आ-जा रही थीं। एक ही तरह की नहीं कई तरह की चींटियाँ वहाँ देखी जा सकती थीं। कुछ इतनी छोटी थीं कि मुश्किल से नजर आ रही थीं जबकि कुछ बड़ी-बड़ी व मोटा-ताजा नजर आ रही थीं। लग रहा था कि सभी बहुत व्यस्त हैं लेकिन कोई किसी के लिए बाधक नहीं। सब अपने-अपने तयशुदा रास्तों पर ही आ-जा रही थीं। चींटियाँ ही क्यों अन्य सभी जीव-जन्तु भी जैसे अपने-अपने कामों में इतने व्यस्त नजर आ रहे थे कि मानो उन्हें दूसरों के कामों में दखल देने की फुर्सत व आदत ही न हो। न तो चींटियाँ ही किसी अन्य प्रजाति की चींटियों के कार्य में बाधा डाल रही थीं और न अन्य जीव-जंतु ही। चूहे अथवा गिलहरियाँ भी न तो पक्षियों से ही परेशान थीं और न चींटियों अथवा अन्य कीट-पतंगों से। यद्यपि प्रवासी पक्षियों को जल्दी ही अपने अगले सफर पर निकल जाना था, इसके बावजूद वे ऐसा व्यवहार कर रहे थे मानों इसी पेड़ और परिवेश के साथ पैदा हुए हों। स्थानीय पक्षी भी न तो किसी भी तरह से इन मेहमानों की उपेक्षा ही कर रहे थे और न उनसे बेचैन अथवा भयभीत दिखलाई पड़ रहे थे।

कुछ दूरी पर अन्य अनेक वृक्ष भी दृष्टिगोचर हो रहे थे। उस कोने पर चुपचाप खड़े वृक्ष को देखिए। सारा बदन जैसे नए-पुराने जख्मों से भरा था। पुराने जख्म अभी पूरी तरह से भरे भी नहीं थे और नए जख्मों से जैसे कुछ ताजा-ताजा रिस सा रहा था। उसके क्षत-विक्षत तने को देखकर लगता था कि अभी-अभी किसी युद्ध के मैदान से लौटा है। रास्ते के नजदीक होने के कारण जो भी इसके पास से गुजरता है वही जो हाथ में हो इसके तने पर दे मारता है। बच्चे इस की टहनियों को तोड़ते-मरोड़ते रहते हैं। पत्तों को नोचते रहते हैं। तने पर खरोंचें मारते रहते हैं। कितना ऊबड़-खाबड़ हो गया है इसका तना! कितनी शुष्क व नीरस हो गई है इसकी छाल! कितनी बेडौल हो गई है समस्त रूपाकृति! इस पर भी पतझड़ में यह अपने बचे-खुचे सारे पत्ते गिराकर पुनः नव पल्लव धारण कर हमें आनंदित करने से नहीं चूकता। समय पर फूलता व फलता है। मनुष्य व जीव-जंतु सबको पुनः अपने आकर्षण में बाँध लेता है। किसी से वैरभाव नहीं रखता। किसी की शिकायत नहीं करता। किसी की उपेक्षा नहीं करता। चीखना-चिल्लाना तो दूर कराहता तक नहीं। हमेशा शांत-स्थिर ही बना रहता है। क्या हम भी ऐसा ही करते हैं?

यद्यपि प्रकृति में जीव-जंतु भी एक दूसरे का भोजन बनते हैं लेकिन फिर भी गजब का सहअस्तित्व है इनमें। बिना पर्याप्त कारण के कोई किसी को नहीं सताता। कोई किसी के काम में बाधा नहीं डालता। एक ही जीव की विभिन्न प्रजातियों में ही नहीं जानवरों और पक्षियों में भी पूर्ण सामंजस्य है। जानवरों व पक्षियों में ही नहीं जंतु-जगत व वनस्पति-जगत में भी कोई आपसी वैमनस्य नहीं। पूर्ण सौमनस्य व संतुलन है। इसी सौमनस्य व संतुलन के कारण धरती पर जैव-विविधता का अस्तित्व बना हुआ है और इसी जैव-विविधता के कारण मनुष्य का अस्तित्व है। लेकिन मनुष्य? मनुष्य न केवल पर्यावरण प्रदूषण बढ़ाकर जैव-विविधता को नष्ट करने पर तुला हुआ है, अपने पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मार रहा है अपितु अपनी स्वयं की प्रजाति से भी उसका व्यवहार ठीक नहीं है।

सारी दुनिया के मनुष्य एक ही प्रजाति के हैं लेकिन कहीं धर्म के नाम पर तो कहीं जाति के नाम पर एक दूसरे पर अत्याचार करने, एक दूसरे को नीचा दिखाने से बाज नहीं आते। कहीं रंगभेद व्याप्त है तो कहीं क्षेत्रीयता। एक ही धर्म के विभिन्न संप्रदाय एक दूसरे के खून के प्यासे बने रहते हैं। अमीर, गरीब का सहारा बनने, उसकी मदद करने की बजाय उसका जम कर शोषण कर रहा है। समाज के विभिन्न वर्ग एक दूसरे को ऊपर उठाने की बजाय उन्हें नीचे गिराने में ज्यादा दिलचस्पी लेते प्रतीत होते हैं। शोषण ही नहीं पाखण्ड और हिंसा भी सर्वत्र व्याप्त है। बलात्कार जैसा जघन्य अपराध करते और बलात्कारियों की पैरवी करते हमें शर्म नहीं आती। पड़ोसी पर अत्याचार हो रहा हो तो हम अपने घर का दरवाजा बंद कर लेते हैं। उर्दू शायर डॉ0 नवाज देवबंदी का एक शेर याद आ रहा है:

उसके कत्ल पे मैं भी चुप था, मेरा नंबर अब आया,
मेरे कत्ल पे आप भी चुप हैं अगला नंबर आपका है।

देश और समाज की छोड़िए एक घर के अंदर भी विभिन्न सदस्यों के शोषण की प्रक्रिया निरंतर बनी रहती है। लिंगभेद के रूप में कन्या भ्रूण हत्या अथवा महिलाओं के अधिकारों का हनन आम बात है। क्या हम मनुष्य प्रकृति से कुछ भी नहीं सीख सकते, जहाँ हर प्राणी दूसरों को कष्ट पहुँचाए बिना आसानी से अपना भरण-पोषण करने में सक्षम है? प्रकृति हमारी सबसे अच्छी शिक्षक है अतः प्रकृति के संदेश को आत्मसात करना न केवल उत्तम है अपितु हमारे हित में भी है। हमें खुद के लिए ही नहीं औरों के लिए भी सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए अपेक्षित परिस्थितियों के निर्माण में सहायक बनना चाहिए। वास्तव में सभी के लिए सुगम परिवेश निर्मित करने में ही निहित है हमारी स्वयं की सुगमता व पूर्ण सुरक्षा।

संपर्क:
ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा,
दिल्ली - 110034
मो. 9555622323
Email : srgupta54@yahoo.co.in

गिरिजाकुमार माथुर

सायंकाल

सूरज डूब गया, धरती का सायंकाल हुआ,
काल-पुरुष मिट गया, घरा का सूना भाल हुआ।

आदि ज्योति उठ गई आज,
मिट्टी के घेरे पार;
युग की अक्षय आत्मा सिमटी,
बनी एक चीत्कार;
आज समय के चरण रुक गए,
हुई प्रलय की हार;
महापूर्णता मानवता की,
छोड़ गई संसार!

मरकर मानव अमर बना
लघु रूप विशाल हुआ!
रुग्ण धरा पर जमी हुई थीं,
सदियां बन प्राचीर;
मानवता पर कसीं युगों से,
पापों की जंजीर;
ईसा-बुद्ध खड़े नत-शिर,
थी खिंचीं शक्ति शमशीर;
तुमने धरती के माथे से
पोंछी रक्त-लकीर ।

मृत प्रतिमा जागी,
जीवित जग का कंकाल हुआ!
एक अवशेष दुखद सपने-सा,
उलझा था संसार;
दिन में जले दीप-सा जीवन,
हतचेतन, निस्सार ।
मिट्टी की चिर सृजन शक्ति का,
ले विराट आधार: तुम हर कन से उठा सके,
मानवता के अवतार ।
पथ की हर पदचाप क्रान्ति,
हर चिह्न मशाल हुआ ।
थकी ज्योति का तिमिर-ग्रसित,
संघर्ष हुआ गतिवान;
इतिहासों के अंधकार से,
उठ आया इन्सान!
हार गई आत्मा पर आकर,
पशुता की चट्टान!
कष्टों से पंकिल मानवता,
उठी बनी हिमवान।
जनता हुई अजेय,
नया जीवन जयमाल हुआ!

किन्तु तिमिर फिर उभरा,
करने अन्तिम अस्त्र-प्रहार;
धर्म, जाति, हिंसा की लेकर,
तक्षक-सी तलवार!
मनुज जला, शैतान उठा,
देवत्व हो गया क्षार;
साम्राजी बीजों से उगे,
शस्त्र-समान विचार!
अन्तिम आहुति पूर्ण हुई,
अन्तिम कर लाल हुआ!
सहस्र विष के दीप बुझ गए,
बुझे गरल तूफान;
भस्म हुआ तम, कर प्रकाश की
रक्त-अग्नि का पान!
तप में रची अस्थियों से,
जन-वज्र हुआ निर्माण ।
मिट्टी नवयुग, तन का हर कन,
रवि की नई उठान!
तुमने मरकर मृत्यु मिटा दी,
विश्व निहाल हुआ।

सुशील स्वतंत्र की कविताएँ

खिड़की

एक खिड़की
जिसके उस पार है
अजनबियत से भरी
एक पूरी दुनिया
इस पार है दोराहे का वह मोड़
जहाँ से तुमने अपनी राह
बदलने का फैसला किया था

इस मोड़ पर वर्षों से
कोई आवाजाही नहीं है
तुम्हारे पैरों के निशान को
पथरीली आँखों से तकता
बस खड़ा रहता हूँ मैं
तुम्हारी पीठ को ओझल हुए
अब तो एक जमाना बीत गया
इतने सालों में ये मानने लगा था
कि सदाओं की भी
अपनी उम्र होती होगी
उनकी भी कोई सरहद होती होगी
अपनी उम्र जी लेनें के बाद
दम तोड़ देतीं होंगीं बैरन सदाएँ

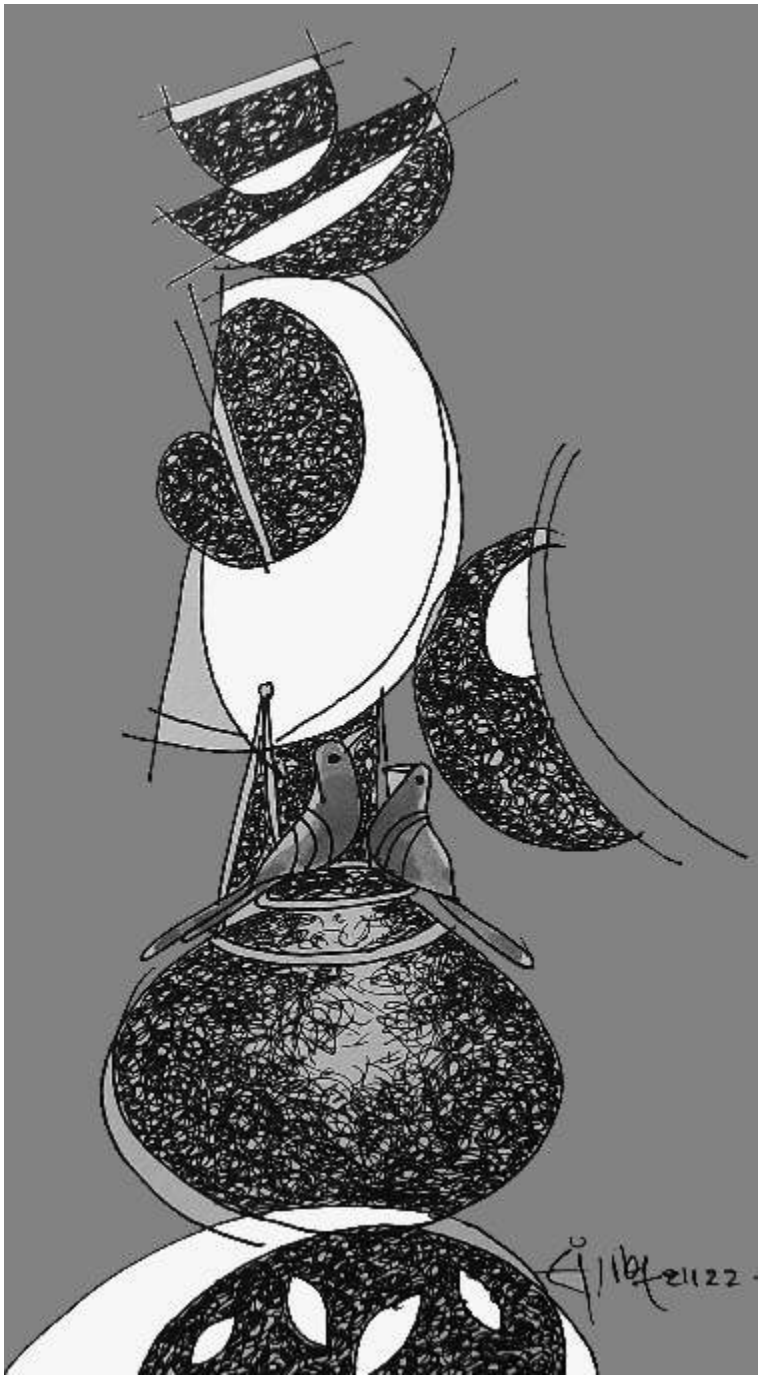

तभी एक दिन
ये खिड़की मिल गई
जिसको खोलते ही जान पाया
कि इस पथरीले दोराहे का रास्ता
जहाँ तक जाता है
उसके पार खुलती है यह खिड़की

इस मोड़ से मुड़ते ही
बहुत दूर निकल गए तुम
जब-जब खोलता हूँ यह खिड़की
दिखती है तुम्हारी नई दुनिया
किलकारियों-कहकहों से भरी हुई
अब ओढ़नी नहीं,
तुम आँचल ओढ़ती हो
थिरकन विदा हो चुकी है
तुम्हारे होंठों से
पेशानी की सिलेट पर
सिलवटों के हर्फ उग आए हैं
पढ़ी जा सकती है साफ-साफ
इस मोड़ से उस दुनिया तक की कहानी
मेरे आलिंगनों ने जिसे
साँचे में ढाला था
नई दुनिया की परतें
चढ़ गई हैं उस देह पर
चुम्बनों से दमकने वाले होंठो को
अब सुर्ख करना पड़ता है तुम्हें
सब कुछ नया है
तुम्हारी दुनिया में
सिवाय इसके कि
बहुत करीने से
संभाल रखा है तुमने
चेहरे पर मासूमियत

मैं भी संभाल लूँगा
इस खिड़की को
मन के छालों की तरह
थोड़ा-थोड़ा खोल लेना है
थोड़ा-थोड़ा जी लेना है

उनको ढूँढ पाना इतना भी मुश्किल नहीं है
फुसफुसाकर जैसे कोई कानों में कहता है
तुमसे बिछड़कर अब वह
फेसबुक पर रहता है।

घर-बाजार

जैसे-जैसे मुहल्ले में
भीड़ बढ़ती गई
बाजार को जगह देने के लिए
घर सिमटने लगे
पता ही नहीं चला
कब दबे-पाँव घरों में
घुस आया बाजार
शहर के तंबू में
पनाह लिए हुए
गाँव सोचता है
कि कोई और गाँव आए
तो दुआ-सलाम हो।

संपर्क:

गीता सदन, अपूर्वा हॉस्पिटल के पीछे,
राँची रोड, रामगढ़, झारखण्ड-829117,
मो. 9811188949

बाल कहानी

जंगल में हड़ताल

बद्री प्रसाद वर्मा अनजान

धीरु शेर आए दिन नये नये कानून बना कर जंगल के जानवरों के सामने मुसीबत खड़ा कर रहा था।

धीरु ने नया कानून बना कर बोला अब जंगल के सभी जानवरों को जंगल विकास टैक्स देना पड़ेगा। जो टैक्स नहीं देगा उसे पांच साल के लिए जेल में डाल दिया जाएगा।

नया कानून बनते ही हाथी, भालू, चीता, हिरन, जेबरा, गैड़ा, सियार, खरगोश, लोमड़ स्याही सभी धीरु शेर के खिलाफ अनशन प्रदर्शन और हड़ताल करने लगे।

देखते ही देखते सारे चंपक वन में हड़ताल और विरोध प्रदर्शन होने लगा। सड़क पर बस टैक्सी सेवा बंद हो गई। जंगल के सभी जानवरों में धीरु के प्रति जोरदार विरोध होने लगा। जगह-जगह धीरु का पुतला जलाया जाने लगा। हाथी, भालू, चीता, गैंड़ा, हिरन और दूसरे जानवर धीरु सरकार के खिलाफ मुर्दाबाद के नारे लगाने लगे।

हाथी का कहना था जबतक धीरु शेर यह कानून वापस नहीं लेगा तब तक हमारा विरोध प्रदर्शन और हड़ताल जारी रहेगा ।

धीरु शेर अपने खिलाफ हड़ताल और प्रदर्शन देख मन ही मन सोचने लगा अगर मैंने कानून वापस नहीं लिया तो अगले महीने होने वाले आम चुनाव में जंगल की जनता हमारी सरकार को उखाड़ फेकेगी। धीरू शेर के मंत्री बंटी बंदर ने सलाह दिया कि आप जल्द से जल्द यह कानून वापस ले लीजिए वर्ना हमें जंगल के जानवर सत्ता से बेदखल कर देंगे।

बंटी बंदर की बात सुनकर धीरु शेर बोला तुम ठीक कह रहे हो बंटी हमें अपना नया कानून वापस ही लेना पड़ेगा वर्ना सत्ता हाथ से निकल जाएगी।

अगले दिन धीरु शेर ने हाथी भालू चीता हिरन जेबरा गैड़ा खरगोश सियार को अपने दरबार में बुला कर कहा हम अपना कानून वापस ले रहा हूं अब आप सब अपना हड़ताल धरना प्रदर्शन भी बंद कर दीजिए।

प्रधानमंत्री धीरु शेर की कानून वापस लेने की खबर सुनकर चंपक वन के सारे जानवर खुशी उछलने कूदने लगे और हाथी जिन्दाबाद के जगह जगह मिलकर खूब नारे लगाने लगे।

अगले महीने जब प्रधानमंत्री का चुनाव की धीरु ने घोषणा की तो जंगल भर में खुशी की लहर दौड़ गई।

जंगल के सभी छोटे बड़े जानवर मिलकर हाथी को धीरु के खिलाफ खड़ा कर दिया।

मतदान में जंगल के आधे से ज्यादा जानवरों ने हाथी को अपना वोट दे कर विजयी बना दिया। हाथी के प्रधानमंत्री बनते ही जंगल के सभी जानवरों में खुशहाली छा गई। जंगल के सभी जानवर धीरु शेर के अत्याचार से छुटकारा पा कर बहुत खुश हुए।

संपर्क:
गल्ला मंडी गोला बाजार 273408, गोरखपुर (उ.प्र.)
मो. 6394878536

मोबाइल में घनचक्कर

रोचिका अरूण शर्मा

एक दिन राकेश रुंआसा हो कर अपने पिताजी से बोला ''मुझे विज्ञान व गणित के सवालों को हल करने में मुश्किल आने लगी है, एक सवाल न आये तो आगे भी गाड़ी अटक जाती है ''।

उसके माँ व पिताजी उस की परेशानी समझ गए थे लेकिन मदद करने में सक्षम नहीं थे । सो उन्होंने उसे दोनों विषयों की ट्यूशन लगवा दी ।

लेकिन राकेश की माँ उसे ट्यूशन के लिए देर शाम के समय अकेले दूर भेजने में असुरक्षित महसूस करती थी । माँ बोली ''बेटा राकेश मैं तुम्हारे पिताजी के पुराने मोबाइल फोन में सिम-कार्ड डलवा देती हूँ ताकि ट्यूशन से आने में उसे कभी देर हो तो तुम मुझे सूचित कर दो या मैं भी तुम से फोन पर बात कर सकूँ''।

राकेश फोन पा कर बहुत खुश हो गया। उसने उत्साहित हो कर सभी मित्रों को अपना फोन दिखाया और उस में बहुत सारे गेम्स भी डाउनलोड कर लिए। उस के कुछ मित्रों के पास पहले से मोबाइल फोन थे और फोन पर मित्रों का एक समूह बनाया हुआ था, उस समूह में अब राकेश को भी शामिल कर लिया गया।

अब राकेश को कभी ट्यूशन से लौटने में देरी होती तो वह अपनी माँ को फोन पर सूचित कर देता।

लेकिन एक गड़बड़ हो गयी। अब राकेश का अधिकतर समय फोन पर चैटिंग करने, गेम और मैसेज में व्यतीत होने लगा, उस का ध्यान पढ़ाई में कम और फोन में ज्यादा रहता।

अक्सर उसकी माँ कहतीं ''देखो राकेश मैंने तुम्हें मोबाइल फोन तुम्हारी सुरक्षा के लिए दिया लेकिन अब तुम इसको गलत इस्तेमाल करने लगे हो, मुझे फिक्र है कि तुम अपना महत्वपूर्ण समय खर्च कर रहे हो''।

लेकिन राकेश अपनी माँ की बात एक कान से सुनता और दूसरे से निकाल देता।

खाना खाते समय भी वह मोबाइल हाथ में ही रखता और उसमें वीडियो देखता। नतीजा यह कि वह क्या खा रहा है और कितना खा रहा है उसे खयाल ही न रहता। कई बार तो वह जरूरत से ज्यादा खाना खा लेता फिर बाद में उसका पेट फूलता और अपच हो जाती। जिससे उसे खट्टी डकारें भी आने लगतीं । कभी-कभार वह खाली थाली में ही हाथ घुमाता रहता क्योंकि उसे ध्यान ही नहीं रहता कि रोटी खत्म हो गयी । इसके लिए कई बार उसकी छोटी बहन निशा उसे चिढ़ाती ''गोल-गोल चकरी, भैया हैं घनचक्करी'' तो वह गुस्से में आग बबूला हो जाता और उस पर भड़क उठता ।

वह दिन-प्रतिदिन पढ़ाई व खेल-कूद से दूर होता गया और मोबाइल पर वीडिओ गेम खेलने में अपना समय नष्ट करने लगा। यहाँ तक कि रात को जब घर के सभी सदस्य सो जाते तब वह अपने मित्रों से चैट करता रहता। शारीरिक गतिविधियाँ कम होने से उसके शरीर का वजन भी बढ़ने लगा था।

जब सुबह उस की माँ उसे जगाती तो वह नींद में ही बड़बड़ाता और खीज कर कहता ''माँ मुझे नींद आ रही है,

मैं और सोना चाहता हूँ, आज मैं स्कूल की छुट्टी कर लूंगा, वैसे भी ट्यूशन तो है ही वहीं पढाई कर लूंगा''।

उस की माँ परेशान हो कर उसे कहतीं ''राकेश तुम्हें कितनी बार समझाया कि फोन पर फालतू समय बर्बाद न करो, रोज रात को देर से सोते हो जिस के कारण तुम्हें सुबह उठने में तकलीफ होती है। नींद पूरी न होने से तुम सारे दिन अलसाए से रहते हो यहां तक कि तुम्हारी आँखों के नीचे काले घेरे भी पड़ने लगे हैं। तुम्हें अपने स्वास्थ्य और पढ़ाई का ध्यान रखना चाहिए''।

लेकिन राकेश को अपनी माँ की ये बातें जरा भी न सुहाती और वह उन्हें अनसुनी कर देता और अक्सर बड़बड़ाता ''ये करो, वो करो .....बस करो करो''।

अब राकेश छुप-छुप कर फोन का इस्तेमाल करता और ऐसा करने में उसे पहले से भी ज्यादा मजा आता क्योंकि वह सोचता कि कोई उसे पकड़ ही नहीं पाता है। जब वह पढ़ने के लिए अपनी मेज पर बैठता तो फोन पास में रखता और अब पढ़ाई के समय में उस का मन भटक जाता तो वह मित्रों से चैट में लग जाता जिस का उसे एहसास भी न होता कि कब एक घंटा चैट में बीत गया। वह सोचता कि अब वह और समय नष्ट नहीं करेगा किन्तु मित्रों के मैसेज आते तो वह उन्हें पढ़ने को उत्सुक हो उठता।

उसकी छोटी बहन जो कक्षा सात में पढ़ती थी वह भी उसकी देखादेखी अपनी मां का फोन लेकर वीडियो एवं गेम में समय बर्बाद करने लगी थी।

देखते-देखते उसे रील देखने की लत पड़ गयी थी। कई बार वह स्वयं अपने वीडियो की रील बनाती। फिर वह देखती कितने लाइक्स और कमेंट्स आये। यदि कभी कम लाइक्स-कमेंट मिलते तो वह रुआंसी एवं तनावग्रस्त हो जाती। मोबाइल पर ज्यादा ध्यान रहता तो वह पानी पीना भी भूल जाती। जिससे उसके शरीर में पानी की कमी होने लगी

और सिर में दर्द की शिकायत रहने लगी।

उसका व्यवहार भी आक्रामक होने लगा था। उनकी माँ अपने दोनों बच्चों के लिए बहुत चिंतित रहने लगी थीं। वह दोनों को समझाने की खूब कोशिश करतीं लेकिन दोनों के कान पर जूं भी न रेंगती।

राकेश की दसवीं की प्री-बोर्ड की परीक्षा समाप्त हुई और कुछ ही दिनों में परिणाम भी घोषित हो गया । राकेश के अंक उस की आशा के अनुरूप अच्छे नहीं थे, उस ने टयूशन के विषय तो पढ़े किन्तु अन्य विषयों पर ध्यान ही नहीं दिया था। रिपोर्ट कार्ड देख कर उसकी आँखों से आंसू छलक पड़े।

राकेश के पिता ने उसे समझाते हुए कहा ''देखो बेटे राकेश, तुम बहुत ही मेहनती एवं होनहार हो, इतने बरसों से तुम अपनी कक्षा में अव्वल छात्र रहे हो। लेकिन तुम अपनी पढ़ाई पर उतना ध्यान नहीं दे रहे जितना कि तुम्हें देना चाहिए। तुम्हीं बताओ इस समस्या का क्या कारण एवं समाधान है'' ?

राकेश अपने पिताजी से नजरें नहीं मिला पा रहा था किन्तु मन ही मन उसे अपनी भूल समझ आ गयी थी और उसके लिए उसे पछतावा भी था। उसने अपना मोबाइल फोन पिताजी के सुपुर्द करते हुए कहा ''पिताजी मैं अपनी गलती के लिए माफी चाहता हूँ, इस फोन के कारण मुझे अपने मन पर नियंत्रण नहीं रहता जिस के कारण मेरा बहुत समय खराब हो गया । मैं अपना टाइम मैनेजमेंट करूंगा, अभी भी समय है मैं जम कर मेहनत करूंगा और बोर्ड परीक्षा में अव्वल अंक लाऊंगा''।

उसकी समझदारी देख कर राकेश के माता-पिता बहुत प्रसन्न हुए और उस के पिताजी ने उसे गले लगा कर कहा ''हमें पूरा विश्वास है कि तुम बोर्ड की फाइनल परीक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होंगे। साथ ही उन्होंने उसे यह भी समझाया कि बेटा मोबाइल तो आजकल की नई तकनीकों की देन है। जिसके लाभ भी हैं। हम उसका इस्तेमाल नई जानकारियों एवं अन्य सुविधाओं के लिए करें तो यह हमारे हित में होता है। मोबाइल बुरा नहीं लेकिन इसकी लत बुरी है। '' राकेश अपने पिताजी की बात झट से समझ गया था और उसके बाद राकेश अपनी पढ़ाई के लिए जी-जान से जुट गया। वह विभिन्न एप्प के माध्यम से भाषा,कला सीखता एवं विभिन्न विषयों पर नयी जानकारियाँ जुटाता। अपने विषयों में किताबों से अतिरिक्त जानकारी पाने से उसकी परीक्षा की तैयारी में लाभ होने लगा था।

एक दिन वह निशा के पास बैठा ''देखो निशा यह रील्स एवं विडियो हमारे अमूल्य समय के दुश्मन हैं, हमारा दिमाग जब इनके बवंडर में घूमता है तो वह जरूरी बातें भूल जाता है। मैं तो अपनी गलती से सबक सीख गया हूँ अब मैं तुम्हें भी यही सलाह देता हूँ कि तुम अपने जरूरी कामों में ध्यान लगाओ।'' छोटी बहन निशा तो उसीकी देखादेखी मोबाइल का इस्तेमाल करने लगी थी। सो बड़े भाई का परिणाम देख कर और उसके समझाने से उसने तय कर लिया था कि वह मोबाइल फोन का इस्तेमाल सोच-समझ कर करेगी।

निशा की माँ सिर दर्द के चलते उसे डॉक्टर के पास ले गयीं तो डॉक्टर ने भी बताया मोबाइल का ज्यादा इस्तेमाल करने से सिर में दर्द रहने लगता है एवं हमारे दिमाग पर भी उसका बुरा असर पड़ता है । क्योंकि हमारा दिमाग तो कंप्यूटर की हार्डडिस्क के समान होता है । उसमें फालतू जानकारी भरेंगे तो जरूरी जानकारी के लिए स्थान नहीं रहेगा । मोबाइल का गलत इस्तेमाल एवं इसकी लत दिमाग को थका देती है । इसीलिए महत्वपूर्ण जानकारी के लिए उसमें जगह ही शेष नहीं रहती और हम पढ़ाई-लिखाई व अन्य क्षेत्रों में पिछड़ जाते हैं ।

दोनों भाई-बहन अपनी गलती समझ गए थे एवं पढ़ाई-लिखाई और अन्य आवश्यक कार्यों को ठीक प्रकार से करने लगे थे । अब वे मोबाइल पर फालतू समय खर्च करने के बजाय खुले मैदान में खेलते एवं स्वस्थ दिनचर्या रखने लगे थे । उन के माता-पिता भी उनकी समझदारी से अत्यंत प्रसन्न थे ।

संपर्क:
मो. 9597172444

मंजिल अभी दूर है

कुसुम अग्रवाल

काफी पुरानी बात है। सन् 1910 के आसपास की। उन दिनों दक्षिणी अफ्रीका के फीनिक्स में एक आश्रम की स्थापना हुई। उसमें एक स्कूल भी खोला गया जिसका उद्देश्य बच्चों को सच्चा ज्ञान बाँटना था। इसी आश्रम के एक शिक्षक, पारंपरिक शिक्षा प्रणाली से हटकर बड़े ही अनोखे ढंग से अपना काम करते थे। उनका सोचना था कि शिक्षा का असर दिमाग के साथ-साथ दिल पर भी होना चाहिए।

एक दिन की बात है उस शिक्षक ने पाँचवीं कक्षा के कुछ छात्रों से एक प्रश्न का उत्तर लिखने के लिए कहा। उन छात्रों में कुछ छात्र बहुत तेज दिमाग के थे तथा कुछ पढ़ने-लिखने में साधारण भी थे। जब सभी छात्रों ने उत्तर लिख लिए तब शिक्षक ने कॉपियां जाँचनी शुरू कीं। कुछ देर बाद, जब सारी कॉपियाँ जाँची जा चुकीं तब शिक्षक ने एक कॉपी उठाई और उस पर लिखे नाम को पढ़कर उस उस छात्र को खड़े होने के लिए कहा। जब वह छात्र सब छात्रों के सन्मुख आकर खड़ा हो गया तब शिक्षक ने उसकी पीठ थपथपाई और कहा- शाबाश! आज तुमने बहुत अच्छा काम किया है। लगता है तुमने काफी मेहनत की है।

यह कहकर शिक्षक ने उस छात्र की कॉपी सबको दिखाई। उसे 10 में से 5 अंक प्राप्त हुए थे। यह देख कर कुछ छात्र हैरान हो रह गए जिन्हें हमेशा की तरह उस छात्र से कहीं अधिक अंक मिले थे। परंतु फिर भी शिक्षक उनके स्थान पर कम अंक लाने वाले छात्र की प्रशंसा कर रहे थे। यह बात उनकी समझ से बाहर थी। तब एक छात्र से रहा नहीं गया और उसने पूछ ही लिया- गुरु जी!

हमारे समझ में यह बात नहीं आ रही कि आप हमारे स्थान पर हम से कम अंक लाने वाले छात्र की इतनी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं। इसके स्थान पर हमारी क्यों नहीं? छात्र के इस प्रश्न पर वह शिक्षक मुस्कुराए और बोले- मैंने इस छात्र की प्रशंसा इसके अंको के आधार पर नहीं की है अपितु इसके सतत् प्रयासों के कारण की है। इसने पिछली बार से एक अंक अधिक प्राप्त किया है जो इसके मेहनतकश होने का सुबूत है।

यदि मैं इसकी प्रशंसा नहीं करुंगा तो इसे भविष्य में मेहनत करने का जुनून कैसे होगा? रही बात तुम्हारी प्रशंसा की? वह मैंने इसलिए नहीं की क्योंकि लगातार मिलने वाली सफलता और प्रशंसा से व्यक्ति दंभी हो जाता है। दंभी होना प्रगति में रुकावट पैदा करता है। मैं नहीं चाहता कि तुम सब क्षणिक सफलता के दंभ में मेहनत करना छोड़ दो क्योंकि मंजिल अभी बहुत दूर है। शिक्षक के इस उत्तर के आगे सभी छात्र नतमस्तक हो गए।

जानते हो ऐसा सच्चा ज्ञान देने वाले गुरु कौन थे? श्री मोहनदास करमचंद गांधी जिन्हें हम प्यार से बापू भी कहते हैं। उन्होंने ही दक्षिणी अफ्रीका में हो रही रंग भेद नीति के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई थी।

संपर्क:

90- महावीर नगर, 100 फीट रोड कांकरोली (राजसंमद) राजस्थान-313324,
मो. 09461179465

फोटो में गांधी

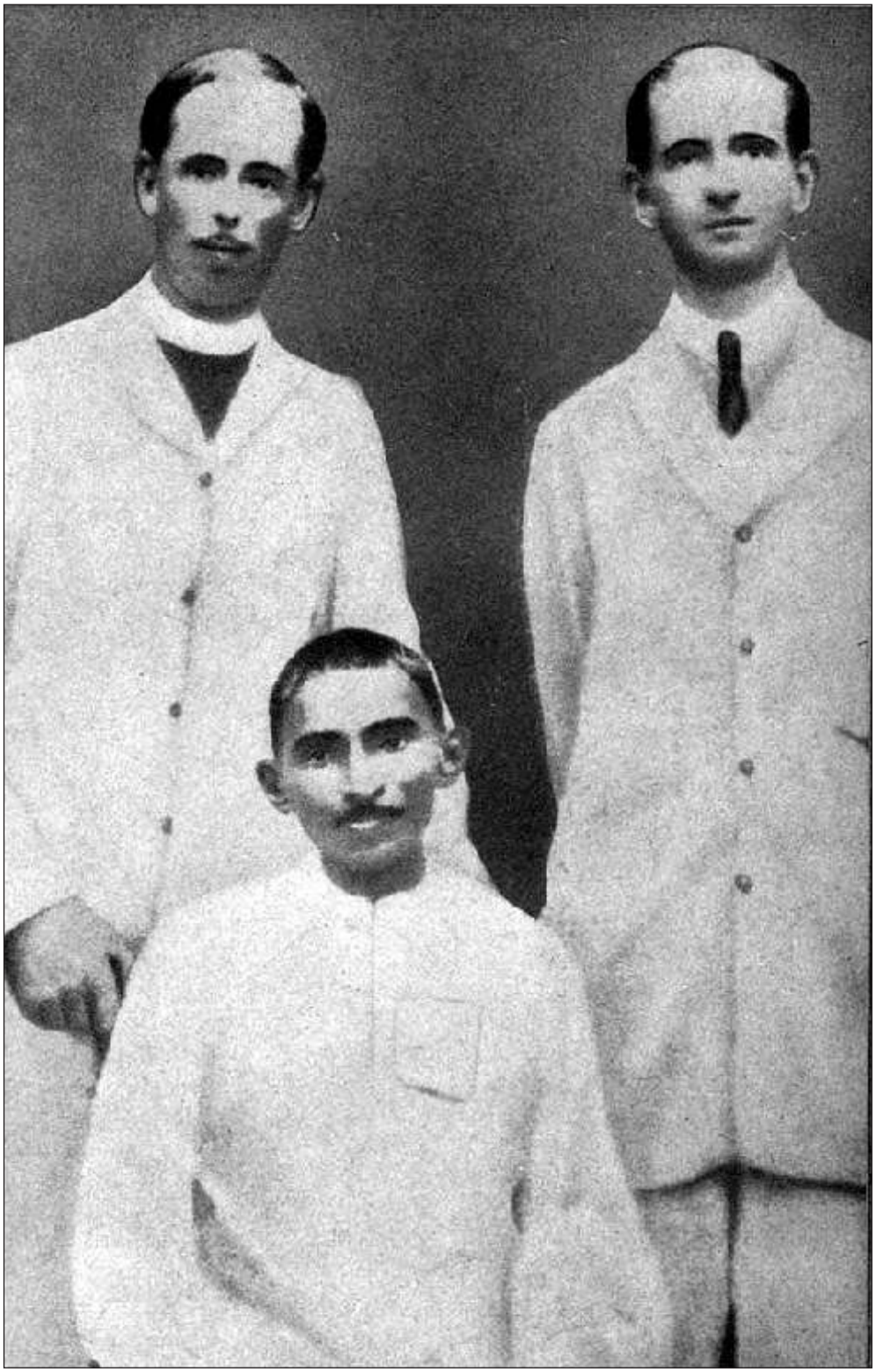

गांधीजी (बीच) के साथ सी.एफ. एन्ड्रयूज़ (बांयी तरफ) एवं डब्ल्यू. डब्ल्यू. पीयरसन (दांयी तरफ), 1914

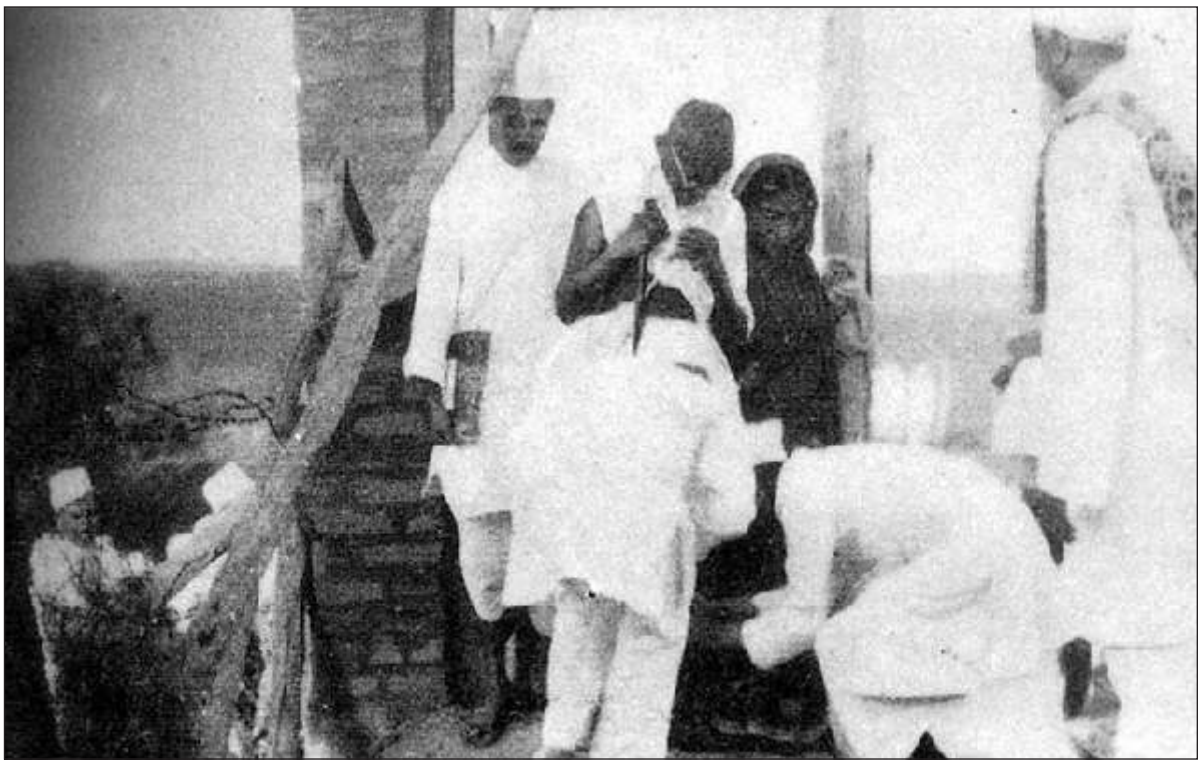

दांडी मार्च के दौरान गांधीजी

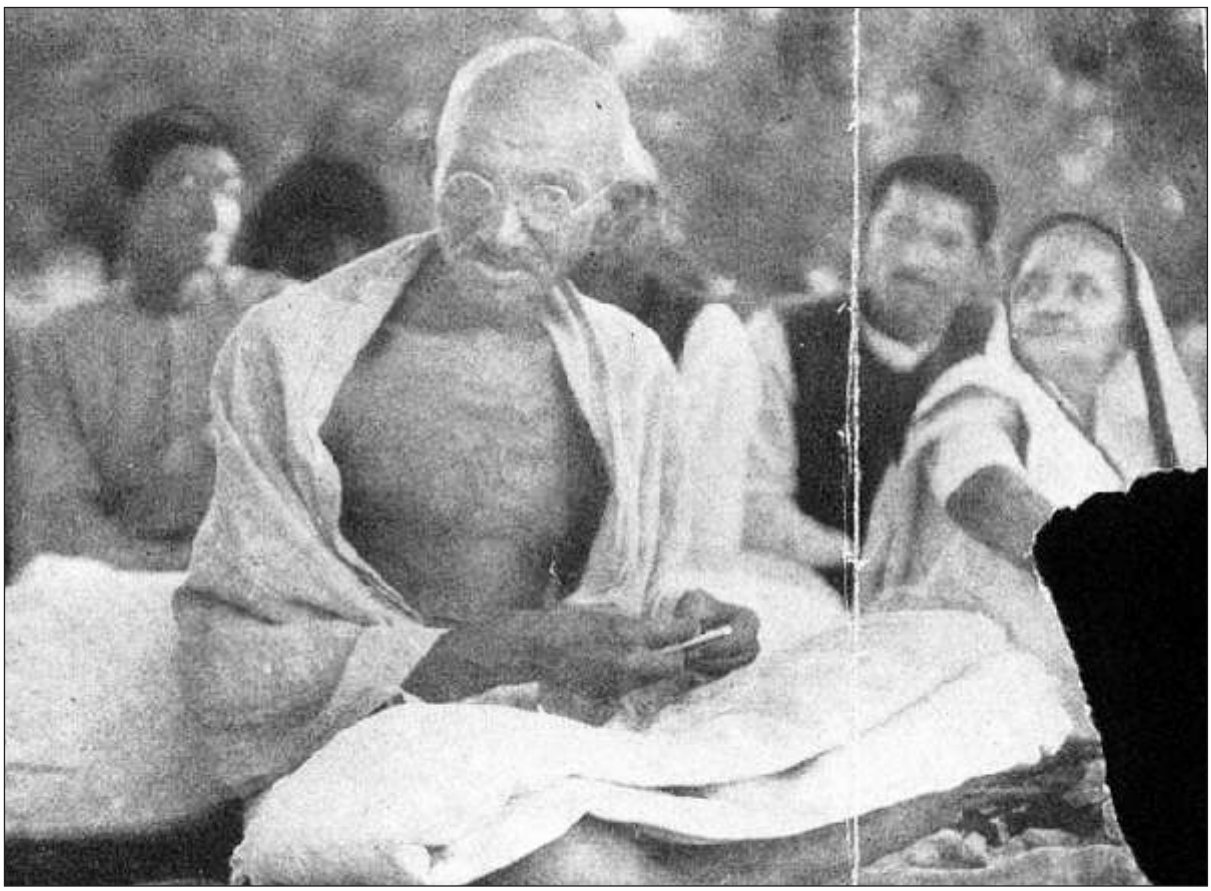

चित्रकारी

श्रेयांश कुमार चौबे
वर्गः छह (एफ)
स्कूलः प्रूडेन्स पब्लिक स्कूल, अशोक विहार, दिल्ली

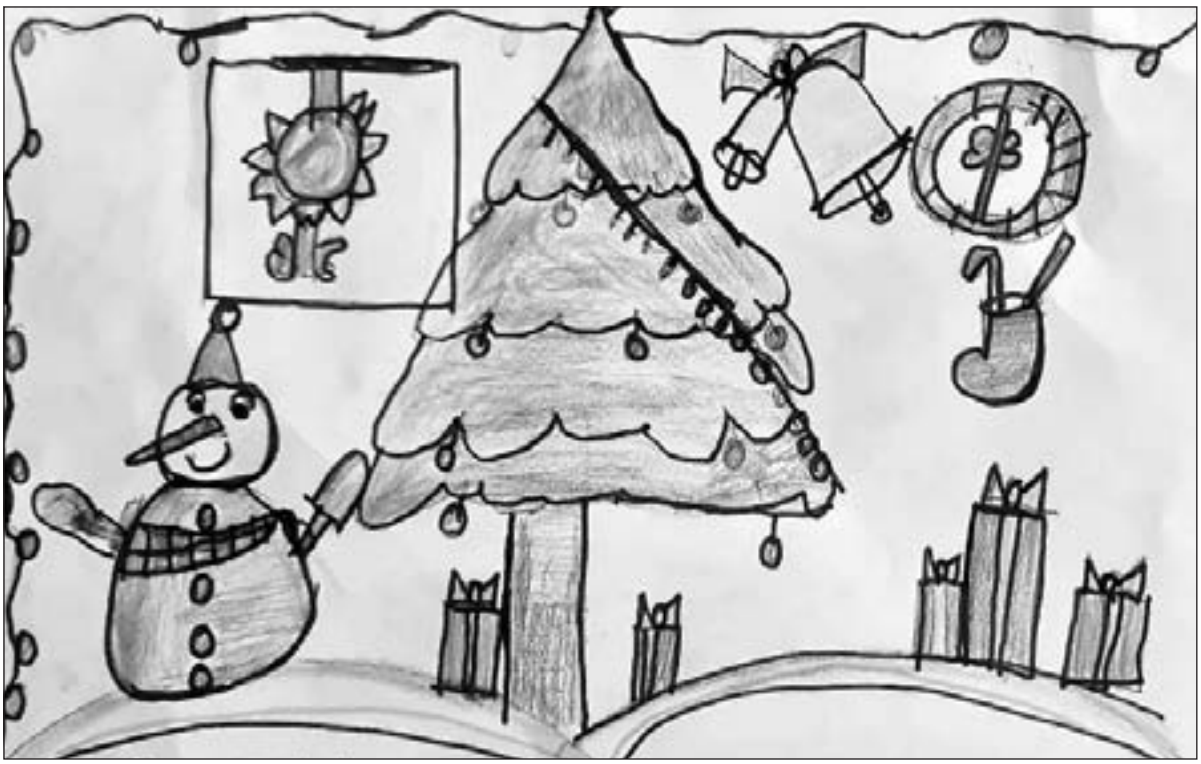

गतिविधियाँ

टूर ऑपरेटरों के साथ बैठक का आयोजन

गांधी स्मृति में 8 दिसम्बर को क्षेत्रीय पर्यटक गाइड एसोसिएशन, इंडियन एसोसिएशन ऑफ टूर ऑपरेटर्स, अतुल्य पर्यटक फैसिलिटेटर्स एसोसिएशन (पंजीकृत), पर्यटन मंत्रालय और निजी गाइडों के टूर ऑपरेटरों के साथ एक बैठक का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता समिति के उपाध्यक्ष श्री विजय गोयल ने की। बैठक में लगभग 60 सदस्यों ने भाग लिया।

श्री विजय गोयल ने गांधी स्मृति और गांधी दर्शन में पर्यटकों की संख्या बढ़ाने के अवसरों और संभावनाओं पर चर्चा की और दोनों स्थानों के लिए भविष्य की परियोजनाओं के बारे में बात की। समिति निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद और कार्यक्रम समिति सदस्य, श्री राजकुमार शर्मा भी चर्चा में शामिल हुए। इस दौरान टूर ऑपरेटरों ने गांधी स्मृति के लिए अपने

गांधी प्रतिमा अनावरण एवं दलित सम्मान समारोह आयोजित

रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने 10 दिसंबर, 2023 को पूर्व केंद्रीय मंत्री और गांधी दर्शन के उपाध्यक्ष विजय गोयल के साथ राजघाट के पास गांधी दर्शन में महात्मा गांधी की 10 फीट ऊंची प्रतिमा का उद्घाटन किया। इस कार्यक्रम में दिल्ली के विभिन्न हिस्सों से 2000 से अधिक लोगों ने भाग लिया।

अपने संबोधन में, राजनाथ सिंह ने इस प्रतिमा को राष्ट्रपिता के लिए एक सच्ची श्रद्धांजलि बताया, जिन्होंने भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराने में केंद्रीय भूमिका निभाई और समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान के लिए काम किया ताकि वे सम्मानजनक जीवन जी सकें।

अपने संबोधन में विजय गोयल ने कहा कि जहां तक दलित समुदाय के उत्थान की बात है तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी गांधी और अंबेडकर के अधूरे कार्यों को पूरा कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि पिछड़ी जाति समुदाय से आने वाले प्रधानमंत्री मोदी खुद वंचितों की पीड़ा जानते हैं और उनके सशक्तिकरण के प्रति संवेदनशील हैं। दरअसल, प्रधानमंत्री मोदी ने ग्रामीण इलाकों के अनुसूचित जाति के बेरोजगार युवाओं को रोजगार मुहैया कराने के लिए खास तौर पर 'पीएम अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना' शुरू की है ।

इस अवसर गांधी दर्शन के कार्यकारी सदस्य, डॉ. महेश शर्मा, भाजपा नेताओं में लाल सिंह आर्य, रामवीर सिंह विधूड़ी, वीरेंद्र सचदेवा, अनिता आर्य आदि उपस्थित थे। गांधी दर्शन के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने कार्यक्रम के शुरू मे स्वागत सम्बोधन दिया। दिल्ली विश्वविद्यालय एवं कथक केंद्र के म्यूजिक फैकल्टी एवं नृत्य कलाकारों ने अपने संगीत एवं नृत्य से दर्शकों को मंत्रमुग्ध किया।

गांधी शिल्प मेला का आयोजन

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति और हस्तशिल्प विभाग द्वारा गांधी दर्शन में 8 दिवसीय गांधाशिल्पमेला का आयोजन किया गया, जिसका उदघाटन 17 दिसम्बर को गांधी स्मृति के उपाध्यक्ष श्री विजय गोयल ने किया। उनके साथ हस्तशिल्प विभाग के निदेशक सोहन कुमार झा और समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद भी थे। इस मेले में पूरे भारत से 95 कारीगरों ने भाग लिया।

इस अवसर पर श्री गोयल ने कहा कि प्रदर्शनी में देश भर के 95 कारीगरों, शिल्पकारों और बुनकरों के कलात्मक कौशल को प्रदर्शित किया गया है। कपड़ा मंत्रालय के विकास आयुक्त (हस्तशिल्प) के नेतृत्व में यह पहल 75 हस्तशिल्प कारीगरों, 10 हथकरघा बुनकरों और 10 खादी बुनकरों को सीधे ग्राहकों से जोड़ने का एक प्रयास हैं, जो आर्थिक सशक्तिकरण और उनकी आजीविका के उत्थान का वादा करती है।

श्री गोयल ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी महात्मा गांधी के विचारों को आगे बढ़ा रहे हैं और उन्हें व्यावहारिक रूप से क्रियान्वित करते हुए हस्तशिल्प और खादी को देश और दुनिया तक पहुंचाने के लिए लगातार काम कर रहे हैं।

8 दिन तक चले इस मेले के दौरान स्कूल बैंड प्रतियोगिता, नुक्कड़ नाटक, पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

'टेकिंग गांधी टू स्कूल'

समिति द्वारा आरम्भ किये गए 'टेकिंग गांधी टू स्कूल' कार्यक्रम के तहत दिल्ली और एनसीआर के अनेक स्कूलों के बच्चों ने गांधी स्मृति संग्रहालय का अवलोकन किया।

'चार कदम वेलफेयर एजुकेशन फाउंडेशन' के 20 बच्चों ने अपने शिक्षकों के साथ 27 दिसंबर को गांधी दर्शन, राजघाट और गांधी स्मृति, तीस जनवरी मार्ग का दौरा किया। इस अवसर पर निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद भी बच्चों से मिले और उनसे बातचीत की।

एलकॉन पब्लिक स्कूल के शिक्षकों के साथ 67 छात्रों ने 27 दिसंबर को गांधी स्मृति का दौरा किया और उन्हें गांधी स्मृति संग्रहालय का निर्देशित दौरा कराया गया। इस मौके पर बच्चों ने 'गांधी क्विज' में भी हिस्सा लिया।

29 दिसम्बर 2023 को ग्रेटर कैलाश स्थित गुरुनानक गरीब निवाज स्कूल के 250 विद्यार्थियों ने गांधी स्मृति का भ्रमण किया इस यात्रा के दौरान 30 शिक्षक उनके साथ थे। उन्होंने गांधी स्मृति संग्रहालय देखा इस अवसर पर बच्चों ने गांधी प्रश्नोत्तरी में उत्साहपूर्वक भाग लिया।

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

हमारे आकर्षण

गांधी स्मृति म्यूजियम (तीस जनवरी मार्ग)

* गांधी स्मृति म्यूजियम
* डॉल म्यूजियम
* शहीद स्तंभ
* मल्टीमीडिया प्रदर्शनी
* महात्मा गांधी के पदचिन्ह
* महात्मा गांधी का कक्ष
* महात्मा गांधी की प्रतिमा
* वर्ल्ड पीस गॉंग

गांधी दर्शन (राजघाट)

* गांधी दर्शन म्यूजियम
* चरखे मॉडल प्रदर्शनी
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री (200 लोगों के लिये)
* सेमीनार हॉल (150 लोगों के लिये)
* कॉन्फ्रेंस हॉल (300 लोगों के लिये)
* प्रशिक्षण हॉल : (80 लोगों के लिये)
* ओपन थियेटर
* राष्ट्रीय स्वच्छता केन्द्र
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री

(डॉ. ज्वाला प्रसाद)
निदेशक

प्रवेश निःशुल्क (प्रातः 10 बजे से सायः 6.30 बजे तक), सोमवार अवकाश
हॉल व कमरों की बुकिंग के लिये संपर्क करें– ईमेलः 2010gsds@gmail.com, 011-23392796

gsdsnewdelhi www.gandhismriti.gov.in

RNI NO. DELHIN/2018/76242

''आप मुझे जो सजा देना चाहते हैं, उसे
कम कराने की भावना से मैं यह बयान नहीं
दे रहा हूँ। मुझे तो यही जता देना है कि
आज्ञा का अनादर करने में मेरा उद्देश्य कानून
द्वारा स्थापित सरकार का अपमान करना
नहीं है, बल्कि मेरा हृदय जिस अधिक बड़े
कानून से-अर्थात अन्तरात्मा की आवाज को
स्वीकार करता है, उसका अनुसरण करना ही
मेरा उद्देश्य है।''

(मोहनदास करमचंद गांधी)

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली
(एक स्वायत्त निकाय, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रकाशक - मुद्रक : स्वामी गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के लिए पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092
से मुद्रित तथा गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110092 से प्रकाशित।